महाभारत

का

यथार्थ स्वरूप व पुनरावृत्ति

दिव्य सन्देश

पवित्र बनो

योगी बनो

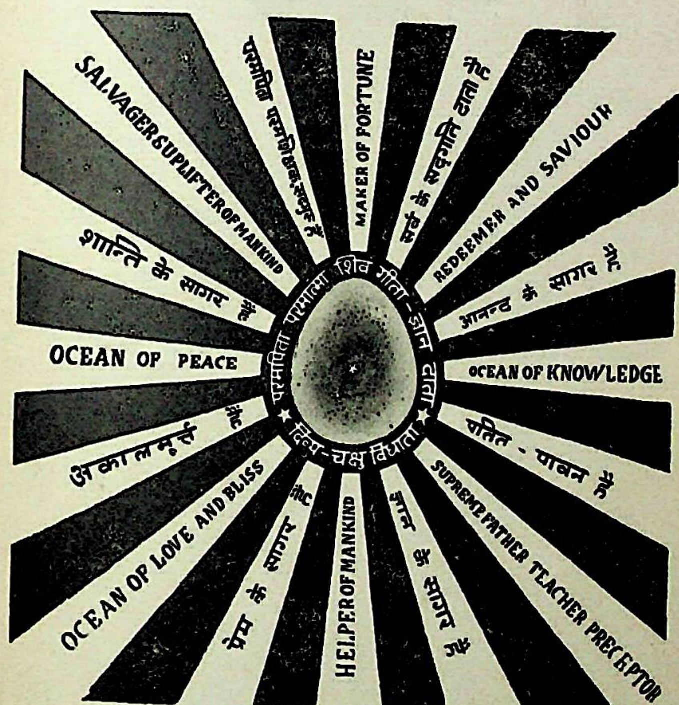
पतितपावन सर्व के जीवनमुक्ति दाता परमपिता परमात्मा शिव कहते हैं।

'हे भारतवासी रूहानी बच्चों ! इस कलियुगी अन्तिम पतित जन्म में पवित्र हो रहने से और परमपिता शिव परमात्मा के साथ बुद्धियोग बल की यात्रा से तमोप्रधान आत्मा से फिर से सतोप्रधान आत्मा बन सत्युगी विश्व पर पवित्रता, सुख, शान्ति सम्पन्न दैवी स्वराज्य फिर पा सकते हो। ५००० वर्ष पहले की तरह।'

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय

पाण्डव भवन, आबू





कलियुगी, तमोप्रधान, पतित, भ्रष्टाचारी सृष्टि को
सत्युगी, सतोप्रधान, पावन, श्रेष्ठाचारी बनाने हेतु
रुद्र ज्ञान यज्ञ अथवा प्रजापिता ब्रह्माकुमारी
ईश्वरीय विश्वविद्यालय के संस्थापक
परमप्रिय परमपिता शिक्षक-सद्गुरु
परमात्मा ज्योतिर्बिन्दु

शिव



विषय-सूची

मुद्रक—रोहिताश्व प्रिंटर्स, २६८, ऐशबाग रोड, लखनऊ—२२६००४.
फोन : २३९७३

प्रस्तावना

महाभारत की ऐतिहासिक सत्यता पर कुछ विद्वानों द्वारा सन्देह व्यक्त किये जाने के कारण वर्तमान समय में जो विवाद चल रहा है उसमें तीन पक्ष उभर कर सामने आये हैं—एक वह जो इसे एक सत्य घटना का सत्य वर्णन मानते हैं, दूसरे वह जो इसे कपोल-कल्पित और कथाकार के उर्वरक बुद्धि की उपज बताते हैं और तीसरा पक्ष वह है जिसके अनुसार गीता और महाभारत युद्ध जैसी घटनायें अवश्य घटीं परन्तु उनकी व्याख्या ऐतिहासिक रूप से न होकर सांकेतिक रूप से हुई और उसमें बाद में कुछ अन्य बातें मिश्रित होने के कारण उसका स्वरूप वास्तविक स्वरूप से भिन्न हो गया। इस पक्ष का ध्यान पौराणिक कथाओं और इन कथाओं पर आधारित भारतीय चित्रकला और मूर्तिकला की ओर गया जिसमें देवियों के शौर्य को बहुभुजाओं द्वारा, दानवों की दानवी वृत्तियों को उनकी भयंकर आकृतियों द्वारा व अन्य भाव इसी प्रकार सांकेतिक रूप से प्रकट किये गये हैं। तीसरे पक्ष ने यह विचार प्रकट किया है कि महाभारत युद्ध एक विश्वव्यापी विनाशकारी युद्ध था जिसे 'प्रलय' की संज्ञा दी जा सकती है। पुराणों के अंत:साक्ष्य का विश्लेषण करने के पश्चात प्रसिद्ध विद्वान प्रो० अच्युत दत्तात्रेय ने इस प्रलय का काल ३१०० ई० पू० माना है जो समय महाभारत के समय से मेल खाता है।

इस पुस्तिका में विचार दिया गया है कि ऐसे विश्वव्यापी विनाशकारी युद्ध के पूर्व स्वयं भगवान ने मनुष्यमात्र के कल्याण अर्थ गीता वर्णित आत्मा, परमात्मा और सृष्टि चक्र का ज्ञान देकर नष्टोमोहा बनने और अपने अन्दर छिपे पंचविकारों से युद्ध करने का पाठ पढ़ाया था। यह पाठ केवल एक अर्जुन को नहीं परन्तु अर्जुन के माध्यम से मनुष्यमात्र को दिया था। इस प्रकार कुरुक्षेत्र का सीमित मैदान

युद्धक्षेत्र न होकर सारा विश्व ही युद्धक्षेत्र था। परमपिता परमात्मा के ज्ञान देने का क्षेत्र भी पूरा विश्व था। इस ज्ञान द्वारा ही उन्होंने अधर्म का विनाश करा कर 'सत्धर्म' की स्थापना की थी। अधर्म की पराकाष्ठा कलियुग के अन्त में होती है और सत्युग में ही पूर्ण सत्धर्म व्याप्त होता है। इस प्रकार युगचक्र में महाभारत युद्ध का समय कलियुग के अन्त और सत्युग के आदि के बीच का संगम समय था। प्रचलित मान्यता कि यह समय द्वापर के अन्त का था, ठीक नहीं है, इसलिये विषय के इस पक्ष पर भी प्रकाश डाला गया है। जहाँ मानव मस्तिष्क में भरे 'अधर्म' अथवा 'अज्ञान' का विनाश परमपिता परमात्मा ने ज्ञान द्वारा किया वहीं पर 'अधर्मियों' का विनाश अधर्मियों ने स्वयं अपने हाथों एक दूसरे पर घातक अस्त्र छोड़ कर किया जिसके लिये कहा गया है कि यदुवंशियों ने अपने पेट से मूसल निकालकर अपने कुल का विनाश किया।

प्रस्तुत पुस्तिका में यह भी विचार दिया गया है कि चारों युगों का कुल समय ५००० वर्ष है। प्रत्येक ५००० वर्ष के पश्चात घटनाओं की पुनरावृत्ति होती रहती है। महाभारत आज से ५००० वर्ष पूर्व घटित घटना है जिसकी पुनरावृत्ति पुनः वर्तमान समय हो रही है। विश्व फिर प्रलय के कगार पर खड़ा है। विश्वयुद्ध में बहुसंख्या में मनुष्य अपनी ही विकृत बुद्धि द्वारा निकाले हुए आणविक व अन्य घातक अस्त्रों द्वारा मानव कुल का विनाश करने को तैयार खड़े हैं। इस ही समय परमपिता परमात्मा भी अवतरित हो अधर्म के विनाश और सत्धर्म की स्थापना का दिव्य अलौकिक कर्तव्य कर रहे हैं। परमात्मा ने आध्यात्मिक क्रांति का बिगुल बजा दिया है। वह प्रायःलोप गीता ज्ञान को पुनः सुना कर मनुष्यों को अधर्म पथ से विमुख कर धर्म पथ पर लाने की चेष्टा कर रहे हैं। इसलिये वर्तमान समय का बहुत बड़ा महत्व है। मानव समाज एक ऐसे मोड़ पर खड़ा है जहाँ एक ओर विनाश की विभीषिका है और दूसरी ओर सम्पूर्ण पवित्रता, सम्पूर्ण सुख व सम्पूर्ण शांति वाली सत्युगी दैवी संसार स्थापन होने की सम्भावनायें हैं।

उपरोक्त विचार उस ज्ञान पर आधारित है जो स्वयं परमपिता

परमात्मा शिव ने प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा दिया और इस समय दे रहे हैं। यह उन अनुभवों द्वारा प्रमाणित है जो इस ज्ञान को जीवन में अपनाने वाली आत्माओं को प्राप्त हुआ है। हम निःसंकोच यह बताना चाहेंगे कि ये विचार किसी ऐतिहासिक खोज पर आधारित नहीं हैं। ईश्वरीय ज्ञान द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि वर्तमान समय गीता महाभारत प्रकरण पुनरावृत्त हो रहा है। इस प्रकाश में जब हम पिछले महाभारत की घटनाओं को और उसके बाद के इतिहास को देखते हैं तो बहुत से ऐसे तथ्य सामने आते हैं जो इसकी सत्यता की पुष्टि करते हैं। कुछ तथ्य इस पुस्तिका में दिये गये हैं परन्तु इसके अतिरिक्त भी खोज करने पर ऐसी और भी बहुत सामग्री मिल सकती है जो इन बातों की पुष्टि करे।

यदि इतिहासकार, पुराविद् व ज्योतिषशास्त्री आदि विद्वान हमारे विचारों के प्रकाश में प्राचीन साहित्य के भंडार का व अवशेषों का अध्ययन करेंगे तो हमें आशा है कि वे इस विषय पर ऐसी सामग्री निकालने में सफल होंगे जो गीता महाभारत के विषय में फैली अनेक भ्रान्तियों को दूर कर इस विषय की उलझी गुत्थी को सुलझा सकेगी।

इस पुस्तिका का लक्ष्य न तो किसी का खण्डन-मण्डन करना है और न ही किसी वाद-विवाद के बखेड़े में पड़ना है। यह तो सौहार्द्र भाव से आपस में मिलजुलकर गीता महाभारत जैसे महत्वपूर्ण विषय में जनमानस में फैली भ्रान्ति को दूर करना है। आने वाले समय के प्रति लोगों को सावधान करने के लिये जो प्रचलित मान्यता उलझन पैदा करती हुई जान पड़ी उसकी समीक्षा करना आवश्यक समझा गया ताकि पाठक हर एक बात को स्पष्ट एवं तुलनात्मक रीति से जानकर सही निर्णय ले सकें और वर्तमान समय के विशेष महत्व को समझ कर उस अनुरूप पुरुषार्थ करें।

अन्त में मेरा नम्र निवेदन है कि प्रभु प्रीति, आत्मस्मृति तथा पवित्रता को धारण करते हुए इस पुस्तिका को पढ़ने से विशेष लाभ होगा।

१६/६४, सिविल लाइन्स, कानपुर
शिवरात्रि, २८ फरवरी, १९७६ — त्रिलोक चन्द गुप्ता

युग क्रम में महाभारत का समय

भारतीय शास्त्रकारों की मान्यता के अनुसार मानव समाज का इतिहास सत्युग, त्रेता, द्वापर व कलियुग के चार युगों में वृत्ताकार रूप से घूमता रहता है। बहुसंख्यक मान्यता के अनुसार महाभारत का समय ३१०० वर्ष ईसा पूर्व निश्चित किया जाता है। महाभारत काल की वर्णित घटनाओं व सामाजिक अवस्था पर दृष्टि डालने पर ऐसा प्रतीत होता है कि वह समय आज के समान ही घोर कलियुग का था। उस समय विज्ञान अपनी पराकाष्ठा पर और मानव चरित्र का पतन निम्नतर स्तर पर था जिसके कारण महाभारत वर्णित घटना घटित हुई और विध्वंसक शस्त्रों द्वारा मानव समाज का महा-विनाश हुआ। संसार की वर्तमान अवस्था के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि हम पुनः महाभारत के कगार पर खड़े हैं। इसका अर्थ हुआ कि पिछला महाभारत भी कलियुग के अन्त में हुआ न कि द्वापर के अन्त में जैसी प्रचलित मान्यता है। इसका दूसरा अर्थ उस प्रचलित मान्यता का भी खंडन हुआ जिसके अनुसार कलियुग की आयु ४३२००० वर्ष बताई गई है। पिछले महाभारत को कलियुग के अन्त में घटित घटना मानने पर यह मानना पड़ेगा कि चारो युगों का चक्र केवल ५००० वर्षों में ही घूम जाता है। इसलिए हम पहले कलियुग की आयु पर ही विचार करेंगे।

प्रचलित धारणा

प्रचलित धारणा के अनुसार कलियुग की आयु ४३२००० वर्ष मानी जाती है। यह भी मान्यता है कि कलियुग का प्रारम्भ महाभारत युद्ध के तुरन्त बाद हुआ जिसे अभी करीब ५००० वर्ष बीते हैं और कलियुग समाप्त होने में ४२७००० वर्ष शेष है। प्रश्न उठता है कि

यदि इन ५००० हजार वर्षों में ही पृथ्वी पर इतना अत्याचार, अनाचार और अधर्म फैल गया है जिसके कारण मनुष्यात्मायें दुखी और अशान्त हैं, मानसिक और शारीरिक दोनों प्रकार के रोगों का बाहुल्य है, नित्यप्रति नये-नये भयंकर युद्धास्त्रों का निर्माण हो रहा है, जल-वायु आदि सब दूषित हो प्रदूषण की समस्या उपस्थित कर रहे हैं तथा जनसंख्या वृद्धि विस्फोटक रूप धारण कर चुकी है। इस गति से ४२७००० वर्षों में इस सृष्टि का क्या होगा ? वह किस अधोगति को प्राप्त करेगी और उस समय के मानव समाज की क्या रूपरेखा होगी ? धर्मग्रन्थों में वर्णित कलियुग के सभी लक्षण तो इसी समय स्पष्ट हैं फिर नया स्वरूप क्या उभरेगा ? इन प्रश्नों में जाने पर विचार आता है कि हो सकता है कि आयु गणना में ही कोई भूल हो। इस लिए उस गणना और उसके आधारभूत सिद्धान्तों पर विचार करना आवश्यक है।

४,३२,००० वर्ष कैसे ?

इस प्रश्न पर कुछ प्रकाश लोकमान्य तिलक लिखित गीता के चतुर्थ हिन्दी संस्करण के पृष्ठ १९२ पर मिलता है। मनुसंहिता, भगवद्गीता और महाभारत में वर्णित कालगणना के आधार पर तिलक जी लिखते हैं कि कलियुग की आयु १००० वर्ष है और उससे सम्बन्धित आयु संधियुग २०० वर्ष है अर्थात कुल मिलाकर १२०० वर्ष है। तिलक जी आगे लिखते हैं कि यह मान लेने पर कि कलियुग का प्रारम्भ महाभारत के बाद हुआ यानि आज से ५००० वर्ष पूर्व हुआ तो 'कलियुग का आरम्भ हुए ५००० वर्ष बीत चुकने के कारण, यह कहना पड़ेगा कि हजार मानवी वर्षों का कलियुग पूरा हो चुका, उसके बाद फिर से आने वाला कृतयुग भी समाप्त हो गया और हमने अब त्रेतायुग में प्रवेश किया है। यह विरोध मिटाने के लिये पुराणों में निश्चित किया कि ये वर्ष देवताओं के हैं।'

देवताओं के दिन की व्याख्या करते हुए तिलक जी लिखते हैं 'हमारा उत्तरायण देवताओं का दिन है और हमारा दक्षिणायन उनकी रात है क्योंकि स्मृतिग्रन्थों में और ज्योतिष शास्त्र की संहिता

(सूर्य सिद्धान्त १.१३; १२.३५,६७) में भी यही वर्णन मिलता है कि देवता मेरु पर्वत पर अर्थात उत्तरी ध्रुव में रहते हैं अर्थात दो अयनों का हमारा १ वर्ष देवताओं के एक दिन रात के बराबर और हमारे ३६० वर्ष देवताओं के ३६० दिन रात अथवा एक वर्ष के बराबर हैं।'

उपरोक्त व्याख्या के अनुसार चूंकि देवताओं का एक वर्ष मानवी ३६० वर्ष के बराबर माना गया है इसलिए १२०० × ३६० = ४३२००० वर्ष कलियुग की आयु निश्चित की गई।

विचारणीय प्रश्न

उपरोक्त वर्णन से मुख्य चार बातें स्पष्ट होती हैं—

१. मूल ग्रन्थों में कलियुग की आयु केवल १२०० वर्ष दी गयी है।
२. मूल ग्रन्थों में यह कहीं नहीं लिखा है कि ये वर्ष मनुष्यों के न होकर देवताओं के हैं।
३. देवताओं को उत्तरी ध्रुव का निवासी मानने के कारण ही उनके एक दिन को मानवी एक वर्ष होने की कल्पना की गई है।
४. मूल ग्रन्थों में वर्णित कलियुग की आयु में उलटफेर करने का एकमात्र कारण यह धारणा है कि महाभारत द्वापर के अन्त की घटना है और उसके तुरन्त बाद कलियुग प्रारम्भ हुआ। इसके स्थान पर यदि यह समझा गया होता कि यह घटना कलियुग के अन्त की है और उसके बाद सत्युग प्रारम्भ हुआ तो फिर ऐसा विरोधाभास उत्पन्न न होता जिसके कारण उलटफेर करना पड़ता। इस तरह कलियुग की आयु की गुत्थी सुलझाने के लिये हमें दो बातों का उत्तर ढूंढ़ना पड़ेगा :
   १. देवताओं का वर्ष और मनुष्यों का वर्ष एक है या भिन्न?
   २. महाभारत की घटना द्वापर के अन्त की है अथवा कलियुग के अन्त में घटित घटना है जिसके बाद सत्युग प्रारम्भ हुआ?

मनुष्य और देवताओं का वर्ष भिन्न नहीं

मनुष्य और देवताओं के वर्ष की भिन्नता का मूल कारण यह

मान्यता है कि देवतायें मेरु पर्वत (उत्तरी ध्रुव) पर रहते हैं जहां निरन्तर ६ मास तक सूर्य का प्रकाश रहता है और उसके पश्चात निरन्तर ६ मास तक अन्धकार छाया रहता है। चूंकि वहां के प्रकाश और अन्धकार का चक्र हमारे एक वर्ष में पूरा होता है इसलिये देवताओं के १ दिन को हमारे १ वर्ष के बराबर मान लिया गया है।

इस बात पर विचार करते समय प्रथम प्रश्न यही होता है कि जब इस भारत भूमि को दैव भूमि अथवा देवताओं का निवास स्थान कहा जाता है तो फिर देवतागण उत्तरी ध्रुव पर कब और कैसे पहुंच गये? यदि हम यह कहें कि वह किसी समय इस भारतभूमि पर निवास करते थे परन्तु बाद में उत्तरी ध्रुव में चले गये तो फिर क्या हम यह स्वीकार करेंगे कि जब वे भारतभूमि पर निवास करते थे तब उनका एक दिन २४ घण्टों का था और बाद में जब वे उत्तरी ध्रुव में चले गये तो उनका एक दिन ३६० × २४ घन्टे का हो गया। या हम यह कहें कि जिस समय वे भारत भूमि पर निवास करते थे उस समय इस देश में ६ मास प्रकाश व ६ मास अन्धकार छाया रहता था। यह भी प्रश्न उठता है कि उत्तरी ध्रुव में रहने वाले देवताओं का रूप क्या है? वे वहाँ पर करते क्या हैं? उनकी सामाजिक रचना कैसी है? वे मनुष्यात्माओं से किस बात में भिन्न हैं? वहाँ पर जाने वाले मनुष्यों को वे दिखाई क्यों नहीं देते? यह सब अनुत्तरित प्रश्न यही संकेत करते हैं कि उत्तरी ध्रुव में देवताओं के निवास की बात भ्रममूलक है और उनके आधार पर उनके दिन और वर्ष का निर्धारण सही नहीं है। मनुष्य और देवताओं के दिन और वर्ष में को भिन्नता नहीं है बल्कि मनुष्य और देवताओं में कोई भिन्नता नहीं है।

मनुष्य और देवता भिन्न नहीं

वास्तव में बड़ी भूल तो यही है कि हमने देवताओं को मनुष्यों से भिन्न जीव मान लिया है। हमारे मन्दिरों में देवताओं की जो मूर्तियाँ

स्थापित हैं उन पर यदि हम दृष्टि डालें अथवा धर्मग्रन्थों में वर्णित

उनके वेशभूषा और रहन-सहन का जो वर्णन है उस पर ध्यान दें तो यह स्पष्ट होगा कि देवताओं की शरीर-रचना भी मनुष्यों जैसी है और वे मनुष्यों की तरह वेशभूषा धारण करते और महलों में रहते थे। अन्तर है तो इतना कि वे दैवी गुणों से युक्त मनुष्य थे और आज का मनुष्य आसुरी लक्षणों वाला है। वे सर्वगुण सम्पन्न, सोलह कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकारी, आत्माभिमानी व मर्यादापुरुषोत्तम थे जबकि आज के मनुष्य पाँचों विकारों में लिप्त सम्पूर्ण विकारी, देहाभिमानी, अवगुणी और अमर्यादित हैं। जिस युग में ये देवता भारत-भूमि में निवास करते थे उसे सत्युग और त्रेतायुग कहा जाता है जिन युगों की इस पृथ्वी को स्वर्ग कहा जाता है। इसके बाद जब यही देवता देह अभिमानी हुए तो वाम मार्ग में गये, विकारी और अवगुणी बने तो मनुष्य कहलाये। उस समय को द्वापर और कलियुग की संज्ञा दी गई है। इन दो युगों की सृष्टि को नर्क कहेंगे। स्वर्ग और नर्क कोई दो अलग-अलग क्षेत्र नहीं हैं बल्कि मनुष्य समाज की ही दो अवस्थायें हैं। पूर्व में ऐसा समय था जब भारत-भूमि पर रहने वाली सभी मनुष्यात्माओं को देवता पद प्राप्त था और उनके धर्म को देवता धर्म कहा जाता था। फिर जब वही आत्मायें सतोगुण से रजोगुण और तमोगुण अवस्था में गिरीं। उनके अन्दर काम, क्रोध, मोह, लोभ और अहंकार विकार भरते गये तो उनकी पवित्रता समाप्त होती गई। अपवित्र संरकारों के कारण ही देवता मनुष्य पद पर आये और आज तो मनुष्य बिल्कुल असुरों जैसा व्यवहार कर रहा है। देवताओं, मनुष्यों और असुरों की शारीरिक संरचना में कोई अन्तर नहीं होता। अन्तर केवल उनके स्वभाव, संस्कार व व्यवहार में है। इस दृष्टि से देखने पर देवताओं के उत्तरी ध्रुव में निवास करने की बात निर्मूल सिद्ध हो जाती है और ऐसे निर्मूल आधार पर आधारित काल गणना सही नहीं हो सकती। फिर तो यही कहना पड़ेगा कि कलियुग की आयु १२०० वर्ष है।

कलियुग का प्रारम्भ

उपरोक्त विवेचन के आधार पर जब हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते

हैं कि धर्मग्रन्थों में वर्णित कलियुग की आयु के १२०० वर्षों से मानवी वर्ष ही अभिप्रेत हैं तो फिर यह आवश्यक हो जाता है कि हम उन लोगों की शंका का समाधान करें जो यह समझते हैं कि महाभारत घटना द्वापर युग के अन्त की है जिसे ५००० वर्ष हुए और उसके बाद ही कलियुग आरम्भ हुआ।

जब मैंने इस बात की खोज की कि ५००० वर्ष पूर्व कलियुग के प्रारम्भ होने की धारणा लोगों में आई कैसे तो मुझे मालूम हुआ कि गीता के भगवान ने किसी सन्दर्भ में यह कहा था कि इस समय पृथ्वी पर कलियुग का प्रभाव है। इस कलियुग शब्द का अर्थ 'कलियुग का अन्त' लिया जाय या 'कलियुग का प्रारम्भ' लिया जाय। यदि हम इसे 'कलियुग का अन्त' मानकर चलें तो सारी उलझी गुत्थियाँ सहज ही सुलझ जायं। वास्तविकता के निर्णय के लिये हम भगवान के महावाक्यों, उस समय की सामाजिक स्थिति और उसमें झलकती हुई उस समय के मनुष्यों की चारित्रिक अवस्था का विश्लेषण करेंगे।

गीता के भगवान के महावाक्य

गीता में भगवान के महावाक्य हैं कि जब पृथ्वी पर अधर्म बढ़ जाता है तो अधर्म के विनाश और सत्धर्म की स्थापना करने मैं आता हूँ। इस महावाक्य से दो बातें स्पष्ट होती हैं। पहली तो यह कि इस कार्य हेतु जिस समय परमात्मा का अवतरण पृथ्वी पर होता है उस समय संसार में अधर्म इतनी पराकाष्ठा पर होता है कि उसे समाप्त करके सुधार लाना किसी गुरु, गोसाईं, साधु संत, विद्वान, आचार्य अथवा समाज सुधारक के वस की बात नहीं रहती और उस कार्य अर्थ स्वयं सर्वशक्तिमान परमात्मा को ही अवतरित होना पड़ता है। युग-चक्र के क्रमानुसार अधर्म की ऐसी पराकाष्ठा तो कलियुग के अन्त में ही हो सकती है। दूसरी बात यह स्पष्ट होती है कि परमात्मा अधर्म को इतने पूर्ण रूप से समाप्त करते हैं जिससे सत्धर्म की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हो सके। इतना ही नहीं, वह नये सत्धर्म की स्थापना भी स्वयं

करते हैं। उन्होंने वास्तव में अपने वचनानुसार सत्धर्म की स्थापना की। परमात्मा द्वारा स्थापित सत्धर्म तो अवश्य सत्युग ही लावेगा। इस प्रकार यदि परमपिता परमात्मा कलियुग के अन्त में आवें और कलियुग समाप्त कर सत्युग की स्थापना करें तभी कहा जावेगा कि उन्होंने अधर्म का विनाश कर सत्धर्म स्थापन किया। यदि प्रचलित मान्यता अनुसार भगवान को द्वापर के अन्त में अवतरित हुआ माना जावे तो क्या द्वापर युग का अन्त करके समाज को कलियुगी बनाने को अधर्म का विनाश और सत्धर्म की स्थापना कहेंगे ? कभी नहीं! इससे यह स्पष्ट होता है कि महाभारत काल, जब भगवान अधर्म विनाश और सत्धर्म की स्थापना हेतु अवतरित हुए, कलियुग के अन्त का समय था प्रारम्भ का नहीं। उसके पश्चात सत्युग प्रारम्भ हुआ। ऐसा समझने पर युगों की आयु-गणना में जो भ्रम उत्पन्न हुआ है वह स्वतः ही दूर हो जावेगा।

महाभारत काल की सामाजिक स्थिति

महाभारत काल की सामाजिक स्थिति का यदि हम वर्तमान की सामाजिक स्थिति के साथ तुलना करें तो स्पष्ट हो जावेगा कि उस समय की सामाजिक स्थिति बिल्कुल ऐसी ही थी जैसी आज है। महा-भारत ग्रन्थ को चाहे ऐतिहासिक सत्य माना जाय या सांकेतिक परन्तु इतना तो निर्विवाद है कि यह ग्रन्थ उस समय के समाज का जीवन्त चित्र अवश्य प्रस्तुत करता है।

उस समय समाज में लोभ की मात्रा कितनी बढ़ी हुई थी और लोभवश मनुष्य कितना क्रूर हो सकता है इसका परिचय हमें आज के युग में भी इससे बड़ा क्या मिलेगा कि दुर्योधन ने अपने ही कुल के भाइयों को उनका राज्य भाग हड़पने के लिये लाक्षागृह में जीवित जला देने का षडयन्त्र रचा। अमानुषिकता और निर्लज्जता का हमें आज के युग में इससे बड़ा प्रमाण क्या मिलेगा कि दुःशासन ने राजदरबार में अपने पितामह भीष्म तथा आचार्य द्रोण के सन्मुख ही अपने भाई की विवा-हिता पत्नी द्रौपदी को नग्न करने का प्रयत्न किया और बड़े-बूढ़े चुप-चाप इस दृश्य को देखते रहे। पिता की आज्ञा की अवहेलना का प्रमाण

है कि धृतराष्ट्र के लाख कहने पर भी दुर्योधन ने इतने बड़े राज्य में से पाण्डवों को पाँच गाँव देना भी स्वीकार नहीं किया और फलस्वरूप महाभारत युद्ध में रक्त की नदियाँ बहीं। आज के समान ही उस समय भी काम विकार में मनुष्य की प्रवृत्ति कितनी बढ़ी हुई थी इसके ज्वलन्त प्रमाण रूप में राजा शान्तनु हैं जिन्होंने अपनी ही प्रजा में से एक निम्न कोटि के मल्लाह की लड़की पर मोहित होकर अपना विवेक इतना खो दिया कि उन्हें अपने पुत्र भीष्म को आजन्म दाम्पत्य जीवन से वंचित करने में हिचक नहीं हुई। युधिष्ठिर जैसे ज्ञानी और धर्मात्मा कहे जाने वाले महापुरुष का दुर्योधन द्वारा जुआ का निमन्त्रण स्वीकार करना, अपना सब धन-धान्य, राज्य-पाट और यहाँ तक कि अपनी विवाहिता पत्नी द्रौपदी को भी जुए में दाँव पर लगा देना और शकुनि द्वारा उस जुए में छल का प्रयोग करना क्या आज की सामाजिक अवस्था से समानता की ओर संकेत नहीं करता। युद्ध में भाई-भाई, गुरु-शिष्य और सगे-सम्बन्धियों ने जिस प्रकार एक दूसरे का वध किया। भीम ने जिस प्रकार दुर्योधन के वक्षस्थल से रक्त का पान किया वैसी क्रूरता और अमानुषिकता को आज की सामाजिक अवस्था से किसी प्रकार भिन्न नहीं कहा जा सकता। इन बातों पर तुलनात्मक दृष्टि डालने पर यह बात बहुत स्पष्ट रीति से उभर कर सामने आती है कि महाभारत काल और आज की सामाजिक अवस्था ठीक एक सी है। इसलिये उस समय भी घोर कलियुग का ही समय था जिसका अन्त स्वयं परमात्मा ने कराया।

महाभारतकालीन युद्धास्त्र और वैज्ञानिक क्षमता

इसके अतिरिक्त यदि हम महाभारत युद्ध में प्रयुक्त युद्धास्त्रों और वैज्ञानिक उपलब्धियों की ओर ध्यान दें तो हमें वह आज के युग से मिलती-जुलती दिखाई पड़ेगी। आकाश मार्ग से अग्नि वर्षा और कृत्रिम जल वर्षा का वर्णन महाभारत में आता है। जिन आग्नेयास्त्रों के प्रयोग का संकेत मिलता है उनकी तुलना तो इस समय बमों से की जा

सकती है। वायु मार्ग से आवागमन तो आज के हवाई जहाज जैसी चीज से ही सम्भव है। १८ दिन की अल्पावधि में १८ अक्षौहिणी सेना का संहार तो किसी वैज्ञानिक युग में ही सम्भव है। यादवों ने अपने पेट से मूसल निकालकर अपने कुल का विनाश किया। आज के मिसाइल्स मानव वुद्धि से निकल मानव कुल का विनाश करने में पूर्ण समर्थ हैं। उस समय इस युग के टेलीवीजन जैसा यंत्र होने का भी संकेत मिलता है जिसमें देखकर वहुत दूर बैठे संजय ने धृतराष्ट्र को कौरवों-पाण्डवों के वीच चल रहे युद्ध का समाचार सुनाया होगा।

अब तो अनेकानेक भारतीय विद्वान व पाश्चात्य विद्वान पुराणों और वेदों के वर्णन के आधार पर यह मानने लगे हैं कि प्राचीन भारत में विज्ञान काफी ऊँचाई पर था। महाभारत विवाद के सन्दर्भ में अपने एक लेख में डाक्टर विमल चन्द्र पाण्डेय लिखते हैं कि 'ऋगवेद आयसी पुरों (लोहे के दुर्गों) का उल्लेख करता है। ऋगवैदिक अस्त्र-शस्त्रों में 'पुर चरिष्णु' विशेष उल्लेखनीय है। यह दुर्गों को गिराने वाली एक मशीन थी। तैत्तरीय संहिता में 'शतहनी' का वर्णन आता है जो एक विनाशकारी यंत्र था। प्राचीन भारतीय बज्र के विषय में प्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान विल्सन ने लिखा है कि वह किसी बारूद जैसे प्रेरक पदार्थ से चलता था। जैन ग्रन्थों में 'रथ मूसल' और 'महाशिला कंटक' नामक यंत्रों का उल्लेख आता है। प्रथम यंत्र एक द्रुतगामी रथ था जो शत्रु सेना में घूम-घूम कर महाविनाश उत्पन्न करता था। द्वितीय यंत्र पत्थरों की भारी वर्षा करता था। प्राचीन भारतीय साक्ष्य अनेकानेक अस्त्रों-शस्त्रों का विवरण देते हैं। यह भी संकेत मिलता है कि प्राचीन भारत में न्यूकलीय भौतिकी की भी जानकारी थी।'

धर्मयुग में प्रकाशित एक लेख में रमेश संझगिरी जी लिखते हैं कि 'कपिलायत सम्भवतः वही स्थान है जहां कपिल मुनि ने विकास के सांख्यमत की व्याख्या की और न्यूकलीय भौतिकी की पूरी जानकारी दिखाई। उन्होंने अपना यह मत डारविन से कोई २००० वर्ष और गेलीलियो तथा न्यूटन से २५०० वर्ष पूर्व प्रतिपादित किया।' बनी

देश पाण्डे जी द्वारा लिखित **Universe of Vedanta** में कहा गया है कि वर्तमान विज्ञान का बहुचर्चित आइन्सटीन का 'सापेक्षवाद' सिद्धान्त वेदान्त रचयिताओं को ज्ञात था। यह उल्लेखनीय है कि 'सापेक्षवाद' सिद्धान्त का ज्ञान होने पर ही अणु-विच्छेदन के वे अनुसंधान हो सके जिन्होंने अणु-बम को जन्म दिया। देशपाण्डे जी यह भी लिखते हैं कि वादरायण, पातंजलि व व्यास ने इन सिद्धान्तों को इसी तरह सिद्ध किया है जैसे आज आइन्सटीन व हीसनवर्ग ने किया। इसके अतिरिक्त हमारे पौराणिक ग्रन्थों में वायु, जल, अग्नि व वेग आदि देवताओं द्वारा असुरों के संहार का वर्णन आता है। इन वर्णनों को यदि हम आज की नवीनतम वैज्ञानिक खोजों से मिलायें तो उनकी सत्यता की पुष्टि होती है। अब प्रश्न है कि ऐसी भयानक युद्ध गाथा का वर्णन तो महाभारत के अतिरिक्त और किसी ऐतिहासिक युद्ध में आता नहीं। जब यह ज्ञान उपलब्ध था और युद्ध में उससे बने शस्त्रों का वर्णन है तो यह अनुमान करना ठीक होगा कि इनका प्रयोग महाभारत युद्ध में हुआ था।

उपरोक्त बातों के होते हुए भी यह बात निर्विवाद है कि वर्तमान वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति पिछले दो सौ वर्षों की और मुख्यतया बीसवीं सदी की देन है। यह भी निर्विवाद है कि ये सब हमारे सामने नये वैज्ञानिक खोज के कारण आईं। फिर प्रश्न उठता है कि प्राचीन वैज्ञानिक ज्ञान कब और कैसे लोप हो गया? इसके लिये यदि हम प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइन्सटीन के शब्दों की गहराई पर ध्यान दें और विश्व इतिहास के पुनरावर्तन सिद्धान्त को मान्यता दें तो बात स्पष्ट हो जावेगी। जब आइन्सटीन से किसी ने पूछा कि क्या वह बता सकते हैं कि तृतीय विश्व युद्ध का क्या स्वरूप होगा तो उन्होंने उत्तर दिया कि वह मैं नहीं बता सकता परन्तु इतना अवश्य कह सकता हूँ कि चतुर्थ युद्ध लोग केवल ईंट-पत्थरों से लड़ेंगे। उनका भाव था कि तृतीय विश्वयुद्ध इतना विनाशकारी होगा कि उसके पश्चात सारी वैज्ञानिक उपलब्धियाँ समाप्त हो जायेंगी और मनुष्य पत्थर युग को लौट जावेगा।

पिछले महाभारत की परिस्थितियों की यदि हम वर्तमान परिस्थि-

तियों से तुलना करके देखें तो स्पष्ट होगा कि पिछला महाभारत युद्ध ऐसे ही महाविनाशकारी युद्धास्त्रों से लड़ा गया था जिन्होंने तत्कालीन मानव समाज पर प्रलय जैसा प्रहार किया। आसुरी कलियुगी असभ्यता सम्पूर्णतया नष्ट हो गई। जनसंख्या बिल्कुल घट गई। जो थोड़े से लोग बचे वे पवित्रता, निर्विकारिता और आत्माभिमानी सुख शांतिमय सादा जीवन व्यतीत करने लगे। उस समाज के समय को सत्युगी दैवी समाज कहा गया। उनको वैज्ञानिक आयुधों की आवश्यकता भी न रही इसलिये वह लोप हो गया। कालान्तर में जब ग्रन्थों की रचना हुई तो उसमें महाभारत काल के अस्त्र-शस्त्रों का वर्णन तो आया परन्तु वे अस्त्र-शस्त्र नहीं थे। इसीलिये हड़प्पा मोहनजोदड़ो आदि की खुदाइयों में ऐसा कुछ नहीं मिलता। परन्तु विश्व का इतिहास पुनरावृत्त होकर पुनः उसी महाभारत काल वाली अवस्था पर आ पहुँचा है।

सत्युग, त्रेता, द्वापर तथ ाकलियुग के चार युगों का चक्र अथवा वृत्ताकार पुनरावर्त्तन तो भारतीय दर्शन का अभिन्न अंग है ही, उसी को यदि हम और सूक्ष्म रीति से समझने का प्रयत्नो करें तो यह निष्कर्ष निकल सकता है कि विश्व का सम्पूर्ण इतिहास इन चार युगों के चक्र में वृत्ताकार रूप से पुनरावर्तित होता रहता है। पुनरावर्त्तन सिद्धान्त से यदि इतिहासकार भारतीय इतिहास की व्याख्या करें तो शायद बहुत-सी उलझी गुत्थियाँ सुलझ सकें और मानव इतिहास का एक नया स्वरूप सामने आवे। गीता महाभारत की ऐतिहासिकता और उसका सच्चा स्वरूप भी इस पद्धति से सहज समझा जा सकेगा।

महाभारत के बाद का सत्युग और त्रेतायुग

यदि हम महाभारत काल अर्थात ३१०० ई० पू० से अशोक के पहले के समय तक के इतिहास को देखें जिसे पूर्व वैदिक काल और वैदिक काल कहते हैं तो मालूम पड़ेगा कि कि उस अवधि में कोई बड़ा युद्ध नहीं हुआ। समाज में सुख और शांति थी। राजा और प्रजा सभी धर्मानुकूल आचरण करते थे। चोरी-डकैती का नाम-निशान न था। घरों

में ताले नहीं लगाते थे, अतिथियों का बहुत आदर-सत्कार होता था, राजा अपनी प्रजा के सुख का पूरा ध्यान रखता था तथा सभी धर्मानुकूल आचरण करते थे।

यदि आप मेगेस्थनीज के समय के भारत की सामाजिक व्यवस्था और उनमें झलकती हुई मनुष्यात्माओं के मानसिक संस्कारों की तुलना महाभारत काल की सामाजिक और मानसिक अवस्था से करें, तो यह सहज समझ में आ जावेगा कि महाभारत काल में जो राग, द्वेष, ठगी, बेईमानी, निर्लज्जता और निर्दयता थी उसका एक अंश मात्र अगले २५०० वर्षों में न था। इससे भी यह निष्कर्ष निकलता है कि महाभारत की घटना अवश्य ही कलियुग के अन्त में घटित हुई। उसके पश्चात सत्धर्म अथवा सत्युग की स्थापना हुई जो अगले २५०० वर्षों तक सत्युग त्रेता दो युगों में चलता रहा। यद्यपि सत्युग त्रेतायुग की आयु प्रचलित मान्यता अनुसार कलियुग की आयु की तिगुनी व चौगुनी हैं। परन्तु यदि हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि महाभारत के समय से लेकर आज तक के ५००० वर्षों में मानव समाज पुनः उसी अवस्था को आ पहुँचा है तो हमें यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि चार युगों का चक्र केवल ५००० वर्षों में ही पूरा हो जाता है। फिर प्रत्येक युग की आयु १२५० वर्ष से अधिक नहीं आती। जैसी कलियुग की आयु गणना में कुछ भूल थी जो ऊपर दर्शाया गया वैसे ही सत्युग, त्रेता युग की आयु गणना में भी भूल मालूम पड़ती है जिसकी जाँच करनी होगी। युगों की आयु की विस्तृत व्याख्या के लिए हमारे यहाँ की प्रकाशित पुस्तक 'विश्व का भविष्य' पढ़ें।

द्वापर व कलियुग

उपरोक्त समय के पश्चात द्वापर युग का प्रारम्भ हुआ। सिकन्दर का भारतवर्ष पर आक्रमण और कलिंग की बड़ी लड़ाई हुई। धीरे-धीरे हालत गिरती ही गई। इस युग के १२५० वर्ष पूरे होते-होते समाज में चोरी, डकैती, ठगी चलने लगी थी जिसका पता चीनी विद्वान ह्वेनसाँग

के वर्णनों में मिलता है जो उस समय भारतवर्ष में आया था। इसी समय मुसलमानों व विजातियों का पदार्पण भारत में हुआ जिसे हम कलियुग का प्रारम्भ काल कहेंगे। उसके बाद तो भारत विदेशियों की दासता में जकड़ता ही गया। इसकी हालत गिरती ही गई। वास्तव में मुसलमानों के आक्रमण के समय ही भारतवासियों का आपसी द्वेष और आपसी फूट उभर कर सामने आया। उसके बाद तो इस प्रकार के फूट और कलह-क्लेश के दृष्टान्त अनेक मिलने लगे। स्त्री जाति को विलासिता का साधन समझना इस काल से ही प्रारम्भ हुआ। उसके लिये रक्त भी बहने लगे। संयोगिता और पद्मिनी की कहानी इसके सबूत हैं। उसके बाद से तो समाज का चारित्रिक स्तर और शांति व्यवस्था तेजी से गिरती गई और उसकी चरम सीमा हम सबके सामने है।

महाभारत प्रकरण की पुनरावृत्ति

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होगा कि न केवल महाभारत काल में समाज और विज्ञान की ऐसी ही हालत थी जैसी कि आज बल्कि उसके बाद का सामाजिक इतिहास भी इस रीति से चला है जिसे हम क्रमशः सत्युग, त्रेता, द्वापर और कलियुग के अनुरूप कह सकते हैं, तो यही निष्कर्ष निकलता है कि महाभारत काण्ड को पिछले कलियुग के अन्त की घटना न समझने के कारण अन्य बातों के अतिरिक्त युगों की आयु गणना की गुत्थी भी उलझ गई। आज के मनुष्य अभी कलियुग को बच्चा समझ बैठे हैं और इस कारण वे न भावी प्रलय स्वरूपी महा-विनाश के प्रति ही सचेत हैं न उसके बाद आने वाले सत्युगी सृष्टि के लिये पुरुषार्थ कर रहे हैं। समझने की बात है कि महाभारत प्रकरण की पुनरावृत्ति वर्तमान समय में हो रही है। गीता वर्णित ज्ञान भी भगवान दे रहे हैं और हिंसक युद्ध के लिये भी विश्व तैयार खड़ा है। इसकी विस्तृत चर्चा आगे की जायगी।

अध्याय २

गीता प्रकरण का यथार्थ स्वरूप

महाभारत के यथार्थ स्वरूप और उसकी ऐतिहासिकता को निश्चित करने के लिये गीता प्रकरण के वास्तविक स्वरूप, समय व स्थान को निश्चय करना अति आवश्यक है। कौरव-पाण्डवों के बीच लड़ा गया महाभारत युद्ध और गीता वर्णित कृष्ण अर्जुन संवाद एक ही समय की कुरुक्षेत्र के मैदान की घटना पौराणिकों ने बताई है और साधारण जनता स्वीकार करती आई है। परन्तु विद्वानों ने जहाँ यह शंका की है कि इतना भयानक संहारकारी युद्ध कुरुक्षेत्र के सीमित क्षेत्र पर होना सम्भव नहीं प्रतीत होता वहीं यह भी सन्देह व्यक्त किया है कि जब दो विरोधी सेनायें परस्पर एक दूसरे का संहार करने के लिये आमने-सामने खड़ी हों और दोनों ओर के सेनापतियों द्वारा युद्ध प्रारम्भ करने का बिगुल बजा दिया गया हो उसके पश्चात रणक्षेत्र में १८ अध्याय का गीता वर्णित श्रीकृष्ण-अर्जुन-संवाद चलता रहा हो। यह सम्भव नहीं प्रतीत होता कि इतने समय तक कौरव सेना शांत रूप से इस बात की प्रतीक्षा करती रहे कि कब हतोत्साहित अर्जुन में श्रीकृष्ण नया उत्साह भर कर पूरा करें, अर्जुन कौरव सेना का संहार प्रारम्भ करें और तब वह अपनी ओर से जवाबी तीर चलायें। इस सन्दर्भ में यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि इस युद्ध में छल, कपट और निहत्थों पर प्रहार जैसे अधार्मिक कार्य प्रचुर मात्रा में अपनाये गये थे। किसी भी पक्ष द्वारा धर्मानुकूल आचरण किया गया हो, ऐसा संकेत नहीं मिलता। युद्ध के मध्य पृथ्वी की दलदल में फँसे पहिये को निकालते समय अर्जुन द्वारा कर्ण पर बाण वर्षा, शिखण्डी को सामने रखकर भीष्म पर बाण वर्षा, असत्य वचन द्वारा द्रोणाचार्य को क्षुभित कर उनकी हत्या आदि

घटनायें पाण्डवों की मनोवृत्ति का परिचय देती हैं तो अभिमन्यु-वध कौरवों की आचार संहिता का स्पष्ट परिचय देता है। इन घटनाओं का संकेत तो कुरुक्षेत्र के युद्ध स्थल पर हुए श्रीकृष्ण-अर्जुन-संवाद की सम्भावना के सर्वथा विपरीत है। तो प्रश्न है कि यदि यह ज्ञान दिया गया तो किस स्थान पर दिया गया ?

दूसरी शंका यह भी उठाई जाती है कि परमपिता परमात्मा ने तो गीता में कहा है कि जब पृथ्वी पर अधर्म बढ़ जाता है तो अधर्म के विनाश और सत्धर्म की स्थापना हेतु मैं आता हूँ। तो क्या उन्होंने कौरव-पाण्डवों का हिंसक युद्ध कराकर इतने मनुष्य प्राणियों का बध कराकर सत्धर्म की स्थापना की ? क्या हिंसा के माध्यम से सत्धर्म की स्थापना हो सकती है ? यदि सत्धर्म की स्थापना का यही तरीका है तो यह कार्य तो एटम बम्ब के निर्माता भी कर सकते हैं। इसके लिये परमात्मा के अवतरण की आवश्यकता नहीं है। यदि इस हिंसक युद्ध द्वारा उन्होंने यह कार्य नहीं किया तो फिर उन्होंने जो दूसरा कार्य किया अर्थात गीता वर्णित ज्ञान दिया उसके द्वारा ही धर्म-स्थापना का कार्य सम्पन्न किया होगा। यही उचित भी प्रतीत होता है क्योंकि अज्ञान ही अधर्म का कारण है और ज्ञान द्वारा ही उसका निवारण होता है। संसार में सत्धर्म की स्थापना आध्यात्मिक ज्ञान के प्रसार द्वारा ही हो सकती है। परन्तु क्या एक अर्जुन को ज्ञान देने से संसार में सत्धर्म की स्थापना हो जायगी ? यह भी तो क़हीं नहीं कहा गया है कि अर्जुन ने फिर इस ज्ञान को संसार में फैलाया, अज्ञान अन्धकार को दूर कर ज्ञान प्रकाश से जगत को प्रकाशित किया। फिर प्रश्न उठता है कि परमात्मा ने इस ज्ञान द्वारा सत्धर्म की स्थापना कैसे की ? क्या उसका स्वरूप श्रीकृष्ण-अर्जुन-संवाद ही था या कोई और रूप ?

इसी से सम्बन्धित एक तीसरी शंका यह है कि क्या यह ज्ञान श्रीकृष्ण ने दिया ? श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार गीता ज्ञान के दाता स्वयं परमपिता परमात्मा हैं। उसमें विभिन्न स्थानों पर 'श्री भगवानुवाच' शब्द का प्रयोग किया गया है। परमात्मा का गुण और कर्त्तव्य

सुनाते समय प्रथम पुरुष में 'मैं' शब्द का प्रयोग किया गया है जिससे स्पष्ट होता है कि स्वयं परमात्मा ने अपना परिचय दिया है। विराट रूप का साक्षात्कार कराते समय भी यही कहा कि तू मेरे इस रूप को देख। वह रूप एक महान तेजोमय ज्योति का था और परमात्मा को प्रकाश या ज्योति ही माना गया है। परमात्मा के गुण और कर्त्तव्य भी गीता में वर्णित हैं। यद्यपि समयान्तर से उसमें कुछ फेर-बदल भी हो गया है फिर भी उसका बहुत कुछ रूप सामने आ ही जाता है। अब परमात्मा के इस रूप गुण की व्याख्या के सन्दर्भ में यह देखें कि क्या वे बातें श्रीकृष्ण के रूप-गुण से मेल खाती हैं? यदि नहीं तो फिर निर्णय करें कि परमात्मा ने यह ज्ञान कैसे सुनाया?

गीता में वर्णित महावाक्यों के अनुसार परमात्मा सर्वज्ञ हैं, सर्व आत्माओं के पिता हैं, जन्म-मरण से न्यारे हैं, दिव्य दृष्टि दाता हैं। मनुष्य सृष्टि के बीज रूप हैं। सर्व आत्माओं के मुक्ति एवं जीवन मुक्ति दाता पतितपावन हैं, सूर्य तथा चाँद व तारागणों के प्रकाश से भी परे परमधाम के निवासी हैं। विष्णु शंकर त्रिदेवों के भी रचता होने के कारण त्रिमूर्त्ति अथवा त्रिपुंडधारी कहलाते हैं? वह निराकार ज्योति-बिन्दु है। उसे सर्व मनुष्य आत्मायें अपना पारलौकिक परमपिता कह कर पुकारती हैं। त्रिनेत्री, त्रिकालदर्शी और त्रिलोकीनाथ के रूप से उसका गायन है। उसको प्रेम का सागर, आनन्द का सागर, शांति का सागर, ज्ञान का सागर तथा सर्वशक्तिमान कहा जाता है। भारतवासी उसे माता, पिता, बन्धु, सखा व सर्व सम्बन्धों से याद करते हुए बहुरूपी कहते हैं। अन्य धर्मावलम्बी उसे आसमानी बाप कहते हैं। गीता में ही भगवान ने कहा है कि मैं इस जगत प्राणियों का माता-पिता व बीज रूप हूँ। परमात्मा सर्व आत्माओं के सद्‌शिक्षक व सद्‌गुरु हैं। इनका कोई पिता, शिक्षक व गुरु नहीं है।

उपरोक्त गुणों की तुलना में हम देखें कि भक्तजन श्रीकृष्ण की क्या महिमा करते हैं? श्रीकृष्ण को सर्वगुण सम्पन्न, सोलह कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकारी मर्यादा पुरुषोत्तम सर्वश्रेष्ठ देवता कहा जाता

है। उन्हें बैकुण्ठ नाथ कहा जाता है। उन्होंने माता के गर्भ से जन्म लिया, माता की पालना ली, शिक्षक से शिक्षा पाई, जीवन की लीलायें करने के पश्चात उनकी इहलीला समाप्त हुई और उनकी मृत्यु हुई। श्रीकृष्ण ने अवतार नहीं बल्कि लौकिक जन्म लिया। श्रीकृष्ण रचता नहीं बल्कि रचना थे।

इस प्रकार तुलना करने पर यही स्पष्ट होता है कि श्रीकृष्ण को परमात्मा नहीं कहा जा सकता। माता के गर्भ से जन्म लेने के कारण उन्हें अवतार भी नहीं कह सकते हैं। श्रीकृष्ण के अन्य गुण भी परमात्मा जैसे नहीं हैं। तो फिर प्रश्न यह है कि परमात्मा कौन है? निराकार परमात्मा ने किस साकार स्वरूप का आश्रम लिया, उसे किस रीति से अपनाया और उन्होंने किस प्रकार गीता वर्णित ज्ञान दिया? इस एक प्रश्न का समुचित उत्तर निकल आने पर अन्य अनुत्तरित प्रश्नों का उत्तर सहज निकल आवेगा। इसलिये हम सर्वप्रथम इसी प्रश्न को लेते हैं।

परमात्मा का परिचय

परमात्मा के अवतरण के सन्दर्भ में जब परमात्मा की चर्चा होती है तो इतनी बात तो निर्विवाद है कि परमात्मा का कोई दिव्य रूप तथा दिव्य धाम है जहाँ से वे इस संसार में उतरते हैं और किसी मनुष्य तन में व्यक्त होते हैं। इस बात को स्पष्ट करने के लिये गीता में भगवान के महावाक्य हैं कि 'मैं अव्यक्तमूर्त हूँ' अर्थात मेरा रूप तो है परन्तु दैहिक (व्यक्त) रूप नहीं है। भगवान ने यह भी कहा है कि 'इस आकाश तत्व के पार एक अव्यक्त तत्व है वह मेरा परमधाम है।' अपने जन्म और कर्म के बताते हुए भगवान ने कहा कि 'मेरा जन्म और मेरा कर्म दिव्य है। मैं साधारण मनुष्यों की तरह जन्म नहीं लेता बल्कि प्रकृति को वश करके साकार होता हूँ।' इससे यह स्पष्ट है कि माता के गर्भ से जन्म लेने वाले भगवान का अवतार नहीं हो सकते। भगवान

इन सब से न्यारे हैं। वह सृष्टि-वृक्ष के अविनाशी बीज रूप हैं और

सृष्टि चक्र के साक्षी हैं। वे केवल धर्मग्लानि के समय ही इस मानव जगत में अपने परमधाम से अवतरित होते हैं। अब जानना यह है कि वह किस प्रकार अवतरित होते हैं। परन्तु उसके पहले उनके स्वरूप की जानकारी लाभप्रद होगी।

भगवान का स्वरूप

परमात्मा (परम + आत्मा) को जानने के पहले यह जानने की आवश्यकता है कि 'आत्मा' का दिव्य रूप क्या है? यह तो सर्व ज्ञात है कि आत्मा इस पंच भौतिक देह से भिन्न एक चेतन अविनाशी ज्योति है। यह ज्योति बिन्दु रूप है। अति सूक्ष्म है। मानव देह में भृकुटी में निवास करती है जहाँ पर भारत में भक्त लोग तिलक लगाते हैं।



जैसे आत्मा एक ज्योति बिन्दु अथवा ज्योति-कण है वैसे ही परमात्मा भी एक ज्योति बिन्दु ही हैं परन्तु वह ज्ञान, पवित्रता, शक्ति, शान्ति तथा आनन्द की दृष्टि से परम हैं। जैसे किसी को 'महात्मा' कहने से उस आत्मा की लम्बाई चौड़ाई का बड़ा होना सिद्ध नहीं होता बल्कि गुणों की दृष्टि से महान होना सिद्ध होता है, वैसे ही 'परमात्मा' शब्द ज्ञान, शक्ति आदि की पराकाष्ठा का द्योतक है न कि किसी सर्वव्यापक सत्ता का। भगवान ज्योति बिन्दु स्वरूप वाले हैं। बिन्दु के न कोई कोण होता है न रेखायें तब भला उसको आकारी कैसे कहेंगे। इसीलिये परमात्मा को 'निराकार' कहा गया है।

परमात्मा का नाम 'शिव'

भगवान सदा विश्व का कल्याण सोचते हैं, कल्याण करते हैं और स्वयं कल्याण स्वरूप हैं इसलिये उनका दिव्य नाम 'शिव' है। उन्हें ही 'अमरनाथ' कहते हैं क्योंकि वह अमर आत्माओं के नाथ हैं। स्मरण

रहे कि 'शिव' और 'शंकर' अलग-अलग हैं। शिव का स्मरण चिन्ह शिवलिंग है जबकि शंकर की मूर्ति देहाकार होती है। शिव की 'ज्योर्लिगम' प्रतिमा सभी धर्मों के लोगों के यहां किसी न किसी नाम से परमात्मा रूप से प्रसिद्ध अवश्य है।

परमात्मा के अवतरण की अनोखी रीति

परमात्मा को 'अजन्मा' कहने का भाव यह है कि वह शरीर में जो प्रवेश या अवतार लेते हैं वह अन्य आत्माओं के शारीरिक जन्म से बिल्कुल 'न्यारा' होता है। उनका जन्म ऐसी अनोखी रीति से होता है कि उन्हें न तो नस-नाड़ी के बन्धन में आना पड़ता है और न वह बाल्य, युवा व वृद्ध अवस्थाओं में आते हैं। मनुष्यों की तरह न उन्हें कोई घाव-चोट लगती है न उनका देहान्त होता है। उन्हें न किसी माता-पिता से लालन-पालन लेना पड़ता है न ही उनके कोई शारीरिक पति-पत्नी, भाई-बहन, पिता-पुत्र आदि सम्बन्धी होते हैं।

इसी प्रकार परमात्मा के 'अशरीरी' या 'अकाय' रूप का न यह अर्थ है कि वह काया नहीं लेते और न ही यह अर्थ है कि वह 'माता के गर्भ से कोई शरीर तो लेते हैं परन्तु उस शरीर द्वारा कोई पाप या पुण्य नहीं करते।' 'अकाय' शब्द का अर्थ है कि परमात्मा की अपनी कोई काया नहीं है। मनुष्य प्राणी तो अपने पूर्व कर्मों तथा संस्कारों के आधार पर कोई न कोई काया लेते हैं। परमात्मा इस प्रकार अपनी काया नहीं लेते। वह ऐसी अनोखी रीति से काया लेते हैं कि काया में होते भी वह अकाय रहते हैं।

परमात्मा सदा मुक्त हैं। वह मनुष्यात्माओं की तरह देह या कर्मों के बन्धन में नहीं आते। परमात्मा तो अन्य आत्माओं को भी मुक्त करने वाले हैं। यदि वह स्वयं देह के बन्धन में आ जायें तब तो उन्हें भी बन्धन से मुक्त करने वाला कोई चाहिये। अतः उनका देह धारण करना किसी कर्म बन्धन के कारण नहीं होता और वह देह में आकर भी मुक्त रहते हैं।

उपरोक्त सभी बातों को सत्य सिद्ध करने वाला जो तरीका परमात्मा के अलौकिक एवं दिव्य जन्म का है उसे 'परकाया प्रवेश' कहा जाता है। परमपिता परमात्मा अपने परमधाम अथवा ब्रह्मलोक से अवतरित होकर एक साधारण वृद्ध मनुष्य तन में प्रवेश करते हैं। अपने प्रवेश के पश्चात वह उस मनुष्य को 'प्रजापिता ब्रह्मा' का नाम देते हैं। उसके तन में अवतरित होकर वह मनुष्य मात्र को पिता, शिक्षक एवं सदगुरु रूप से प्रेम और ज्ञान तथा स्नेह और सहायता देते हैं और उन्हें पतित से पावन तथा भोगी से योगी बनाते हैं। स्पष्ट है कि मनुष्य को पतित से पावन बनाने के लिये ज्ञान देने की आवश्यकता है और यह कार्य अन्य किसी विधि से नहीं हो सकता। न कोई अन्य अमानुषी रूप धारण करने से हो सकता है। अतः प्रजापिता ब्रह्मा के मानुषी रूप में ही परमात्मा जगतपिता तथा जगतगुरु के नाम से विख्यात हैं।

जिस शरीर को परमपिता परमात्मा पर काया प्रवेश विधि से अपनाते हैं वह शरीर उस मनुष्य ने अपने ही कर्मों और संस्कारों के आधार पर लिया होता है। वह ही उस द्वारा कर्म करता और फल भोगता है। वह ही उसके नस-नाड़ी या श्वास-प्रश्वास के बन्धन में होता है। उसने तो वह शरीर माता के गर्भ से लिया और अपने माता-पिता से लालन-पालन भी पाया। वह आत्मा मुक्त या कर्मातीत भी नहीं होती। उसके अपने लौकिक मित्र-सम्बन्धी आदि भी होते हैं। परन्तु जब उस शरीर में परमपिता परमात्मा दिव्य प्रवेश करते हैं तो मानो वह कुछ समय के लिये उस काया को उधार लेते हैं अथवा विश्व कल्याण के लिए उसका प्रयोग करते हैं। वह सारा दिन अथवा निरन्तर कुछ वर्ष उसमें प्रविष्ट हुए ही नहीं रहते बल्कि समय प्रति-समय उसमें प्रवेश करके उसके मुख के माध्यम से ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज राज योग की शिक्षा देते हैं और पुनः अपने परमधाम वापस चले जाते हैं। इस प्रकार पिता परमात्मा धर्म स्थापना अर्थ उस तन में आते-जाते रहते हैं।

उस मनुष्य की आत्मा तो उस शरीर में अपने जीवन काल पर्यन्त रहती ही है परन्तु उसके तन में 'परमपिता परमात्मा' नाम वाली आत्मा भी सन्निवेश करती है अर्थात साथ ही बैठती है, मानो एक शरीर रूपी रथ में मनुष्यात्मा (ब्रह्मा की आत्मा) और परमपिता परमात्मा (गीता ज्ञान दाता) दोनों सवार होते हैं। शरीर रूपी रथ में ब्रह्मा की आत्मा के साथ-साथ उनके शरीर रूपी रथ पर परमात्मा के सवार होने के कारण परमात्मा को सा+रथी या सारथी (साथ का रथी) कहा गया है। उन्होंने किसी घोड़े के रथ को हाँकने का कार्य नहीं किया है।

इस प्रकार गीता ज्ञान दाता भगवान ने अजन्मा होते हुए भी 'परकाया प्रवेश' विधि से दिव्य जन्म अथवा अवतार लिया, और उन्होंने मनुष्य मात्र के काल्याण अर्थ उनका अज्ञान अन्धकार दूर करने अर्थ धर्मग्लानि के समय ईश्वरीय ज्ञान सुनाया। इस दृष्टिकोण से हम श्रीराम और श्रीकृष्ण को देवता की श्रेणी में रक्खेंगे। हम उन्हें अवतार नहीं कह सकते। हम प्रजापिता ब्रह्मा को भी अवतार नहीं कह सकते बल्कि ब्रह्मा के तन में जिस परमपिता परमात्मा ज्योति बिन्दु शिव का सन्निवेश होता है उसे ही अवतरित हुआ कहेंगे। ब्रह्मा तो उनका रथ मात्र है।

परमात्मा का रथ 'ब्रह्मा' कैसे ?

ब्रह्मा को आदिदेव कहा जाता है और यह माना जाता है कि मनुष्य सृष्टि की आदि ब्रह्मा से हुई है। ईसाई और मुसलमान भी उसे ऐडम या आदम के नाम से सृष्टि का प्रथम पुरुष मानते हैं। इस प्रकार सभी यह मानते हैं कि ब्रह्मा द्वारा सृष्टि की स्थापना हुई। भारतीय दर्शन की मान्यता अनुसार ब्रह्मा-विष्णु-शंकर त्रिदेवों में से स्थापना के कार्य का निमित्त ब्रह्मा को ही माना गया है। अब स्थापना का एक अर्थ तो स्थूल जगत का निर्माण हो सकता है और दूसरे अर्थ में इसका प्रयोग एक सुसंस्कृत और सुगठित समाज रचना के लिये किया जा

सकता है। जहाँ तक स्थूल जगत के निर्माण का प्रश्न है वह तो सर्व मान्यता अनुसार अनादि है न वैज्ञानिक और न दार्शनिक ही स्वीकार करेंगे कि स्थूल जगत निर्माण सृष्टि के प्रथम पुरुष ब्रह्मा, ऐडम या आदम ने किया। तो फिर बात दूसरे प्रकार के स्थापना की ही रह जाती है। इस स्थापना में मनुष्यों में शुद्ध संस्कारों को जन्म देने की बात है। शुद्ध संस्कारों का जन्म ज्ञान द्वारा होता है। इसलिये कहा गया है ब्रह्मा ने यज्ञ रचा। यह बात ज्ञान यज्ञ की है। इस यज्ञ में संस्कारों को पवित्र करने की क्रिया को यज्ञोपवीत संस्कार कहा जाता है। यज्ञोपवीत संस्कार द्वारा ब्राह्मणों को पवित्र किया जाता है। ये ब्राह्मण ब्रह्मा मुख वंशावली कहे जाते हैं। अब मुख से किसी स्थूल मनुष्य के जन्म लेने की तो बात नहीं है। मुख से तो वाणी निकलेगी उस वाणी में ज्ञान होगा। जिस ज्ञान को सुनकर शूद्र बुद्धि मनुष्य श्रेष्ठ ब्राह्मण बुद्धि बनता है। यह ज्ञान ब्रह्मा के पास कहाँ से आया? यह ज्ञान ब्रह्मा के मुख का आधार लेकर स्वयं परमपिता परमात्मा ही सुनाते हैं। इस सुनाने से ही सत्धर्म की स्थापना होती है जिसकी चर्चा गीता में है। सत्धर्म द्वारा सत्युग का प्रारम्भ होता है। सत्युग को कल्प का आदि माना गया है। इसी को सृष्टि का आदि भी कहा गया है। वास्तव में शब्द है नवीन सृष्टि की आदि। नवीन सृष्टि इसी-लिये कहा जाता है कि इसके पूर्व की घोर कलियुगी तमोगुणी सृष्टि का इसके पहले विनाश हो चुका होता है। अधर्मी मनुष्य अपनी ही तमोगुणी बुद्धि से निकाले हुए अस्त्र-शस्त्रों द्वारा मनुष्य कुल का विनाश करते हैं। और परमपिता परमात्मा ब्रह्मा मुख द्वारा ज्ञान सुनाकर अधर्म का विनाश व सत्धर्म की स्थापना करते हैं। ध्यान देने योग्य बात है कि मनुष्य शरीरधारी होते हुए भी ब्रह्मा का जन्म या उनके माता-पिता का उल्लेख कहीं नहीं आता। इसका कारण यह है कि ब्रह्मा नाम तो परमात्मा के उस तन में प्रवेशता के पश्चात है इसीलिये गीता में अर्जुन ने कहा कि 'हे महात्मन्! तुम ब्रह्मादेव के भी आदि कारण और उनसे भी श्रेष्ठ हो। उस मनुष्य तन धारी को ब्रह्मा पद प्राप्त कराने का

कारण परमात्मा की प्रवेशता है न कि माता के गर्भ से जन्म। यह सभी बातें इस बात की पुष्टि करती हैं कि परमपिता परमात्मा ने सत्धर्म की स्थापना हेतु ब्रह्मा तन का ही आधार लिया। जहां तक श्रीकृष्ण का प्रश्न है वह तो सर्वगुण सम्पन्न, सोलह कला सम्पूर्ण, निर्विकारी, मर्यादा-पुरुषोत्तम सत्युगी दैवी सृष्टि अथवा बैकुण्ठ के प्रथम राज कुमार थे इसलिये उन्हें बैकुंठ नाथ कहा गया है। ब्रह्मा द्वारा स्थापित दैवी सृष्टि के प्रथम राजकुमार होने के कारण उन्हें पीपल के पत्ते पर अथाह जल सागर से अकेले तैरता दिखाते हैं।



सर्वगुण सम्पन्न सोलह कला सम्पूर्ण सम्पूर्ण निर्विकारी मर्यादापुरुषोत्तम सत्युग के प्रथम महाराजकुमार श्रीकृष्ण

परमात्मा का कार्य-क्षेत्र और विधि

परमात्मा का अवतरण किसी एक अर्जुन अथवा दस-बीस व्यक्तियों को ज्ञान देने के लिये नहीं होता बल्कि संसार को पवित्रता और सदा-चार का पाठ पढ़ाकर मनुष्यमात्र के जीवन को एक नया मोड़ देने के लिये होता है। मनुष्य ही इस संसार का मुख्य प्राणी है। मनुष्य के बिगड़ने से सारी सृष्टि बिगड़ जाती है और यदि मनुष्य सम्प्रदाय दिव्य गुण सम्पन्न हो जाय तो सृष्टि स्वर्ग हो जाती है। अतः इस संसार में सुख-दुख का होना मनुष्य के कर्मों पर आधारित है। मनुष्य के कर्म उसकी मानसिक वृति के आधार पर चलते हैं। मानसिक वृत्तियों का नियन्त्रण बुद्धि द्वारा होता है। अतः यदि मनुष्य की बुद्धि भ्रष्ट हो जाय, ईश्वर से विमुख हो जाय, सदाचार और पवित्रता से हट जाय तो इस सृष्टि में घोर पापाचार, अत्याचार, दुख और अशान्ति हो जाती है। इसीलिये दुःख और अशान्ति से छुड़ाने के लिये परमात्मा शिव

मनुष्य की बुद्धि को ज्ञान का अंकुश देते हैं। वह मनुष्य बुद्धि को विषय-वासनाओं से हटाकर आत्म स्मृति तथा ईश्वरीय स्मृति में स्थित कराते हैं। इस स्मृति के लिये वह मनुष्यों को आत्मा, परमात्मा और सृष्टि चक्र का ज्ञान सुनाते व राजयोग सिखलाते हैं। इसके लिये वह ज्ञान यज्ञ रचते हैं अथवा ईश्वरीय विश्वविद्यालय स्थापित करते हैं।

इस विश्वविद्यालय में प्रजापिता ब्रह्मा मुख द्वारा जो मनुष्यात्मायें परम-पिता परमात्मा का ज्ञान लेती हैं, पूर्ण पवित्रता धारण करती हैं और सत्धर्म की स्थापना में परमात्मा शिव के सहायक रूप में अपनी सेवा अर्पित करती हैं वह ब्रह्मा मुख-वंशावली ब्राह्मण और ब्राह्मणियाँ कहलाते हैं। इन ब्राह्मणियों को शिव शक्तियाँ भी कहा जाता है। जो ज्ञान इन्हें ब्रह्मामुख द्वारा मिलता है उसे फिर यह सारे संसार में फैलाकर अन्य मनुष्यात्माओं को देते हैं। इस प्रकार संसार की मनुष्यात्मायें असुर से देवता बनते हैं। तमोप्रधान से सतोप्रधान, दुखी से सुखी व अशांत से शांत हो जाते हैं। यह सृष्टि कलियुगी नर्क से सत्युगी स्वर्ग बनती है। इसे ही परमात्मा द्वारा सत्धर्म की स्थापना कहा जाता है। स्थापना का यह कार्य कोई एक अर्जुन को ज्ञान देने से पूरा नहीं होता बल्कि इसके लिये विश्वव्यापी आध्यात्मिक क्रांति की आवश्यकता होती है और भगवान ने इसी क्रांति द्वारा अपना कार्य सम्पन्न किया।

युद्ध क्षेत्र

महाभारत में यह वर्णन आता है कि भगवान ने गीता ज्ञान युद्ध के मैदान में सुनाया था। ऊपर हम बता आये हैं कि भगवान ने यह ज्ञान कोई एक अर्जुन को नहीं दिया बल्कि उनका सन्देश तत्कालीन समस्त मानव प्राणियों के लिये था। उन्होंने ब्रह्मा मुख द्वारा जो ज्ञान सुनाया उसे ब्राह्मणों ने धारण कर विश्व की अन्य आत्माओं को धारण कराने विश्व के कोने-कोने में भ्रमण किया। तो इस प्रकार भगवान के ज्ञान देने का क्षेत्र सारा विश्व ही था। इस सन्दर्भ में यदि हम तत्कालीन सामाजिक स्थिति और कलह-क्लेश के फैलाव की ओर

दृष्टिपात करते हैं तो पता लगता है कि यह सारा विश्व ही युद्ध क्षेत्र बना हुआ था। जब प्रत्येक मानव की भावनायें कलुषित हैं तो स्वाभाविक रूप से घर-घर में भी कलह क्लेश होगा, हर देश में झगड़ा-लड़ाई चलता होगा और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी शांति होने की सम्भावना नहीं रहती।

महाभारत वर्णित अस्त्र-शस्त्रों से और उसमें हताहत हुए मनुष्यों की बहुसंख्या से यही प्रकट होता है कि यह एक विश्वव्यापी युद्ध था। वास्तविक युद्ध छिड़ने के कुछ समय पूर्व शीतयुद्ध चलता है। विरोधी राष्ट्रों द्वारा युद्ध की धमकियाँ अथवा युद्ध के बिगुल बजाये जाते हैं। समाज में अनिश्चितता की स्थिति छा जाती है। लोग सशंकित और भयभीत दिखाई पड़ते है। इस अवधि में ही परमपिता परमात्मा अपना दिव्य ज्ञान मनुष्यात्माओं के कल्याण अर्थ देते हैं। जब युद्ध छिड़ जाय उसके बाद तो प्रलंयकारी विनाश का ताण्डव नृत्य ही चलने लगता है। उस समय लोग त्राहि-त्राहि कर रहे होते हैं। संसार में हाहाकार मच जाता है। ऐसे समय में तो ज्ञान लेने और देने का समय नहीं होता। गीता प्रकरण को यदि हम इस परिप्रेक्ष्य में देखें तो यह स्पष्ट होगा कि जिस युद्ध क्षेत्र का संकेत महाभारत में है वह युद्ध-क्षेत्र कुरुक्षेत्र का सीमित मैदान न होकर यह सारा विश्व ही युद्ध-क्षेत्र था।

अध्याय ३

महाभारत युद्ध का यथार्थ स्वरूप

युद्ध का वर्णन जिस प्रकार से महाभारत में किया गया उसमें कुछ इतना विरोधाभास है कि उसमें से यथार्थ बात को निकाल पाना सरल कार्य नहीं है । एक ओर कुरुक्षेत्र के सीमित मैदान पर युद्ध तो दूसरी ओर उसमें इतनी बड़ी सेना का भाग लेना व उसमें हताहत मनुष्यों की इतनी बड़ी संख्या दिखाई गई है जिनका कुरुक्षेत्र के मैदान पर एकत्रित होना तो क्या सम्भव होता इतनी आबादी सारे भारतवर्ष की भी नहीं हो सकती । गीता प्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित महाभारत में यह वर्णन आता है कि 'भीष्म जी ने दस दिनों के युद्ध में एक अरब सेना का संहार कर डाला ।' अब एक अरब तो पाण्डवों की सेना का संहार हुआ तो अवश्य ही दूसरी ओर के कौरव सेना के हताहतों की संख्या भी इसके आसपास होनी चाहिये । इसके अतिरिक्त अभी ८ दिन का युद्ध और बाकी था । उसमें भी काफी संख्या में लोग मरे होंगे । इन सबको यदि जोड़ा जाय तो कदाचित् वह आज के विश्व की पूरी जनसंख्या के बराबर हो जाती है ।

हताहतों की उपरोक्त संख्या के संदर्भ में यदि हम महाभारत युद्ध के यथार्थ स्वरूप का निर्णय करना चाहें तो दो ही बातें सामने आती हैं । या तो यह सारी कहानी कवि की कोरी कल्पना है और महाभारत जैसी कोई घटना कभी घटी ही नहीं । या दूसरी बात यह हो सकती है कि इस युद्ध का स्वरूप बहुत व्यापक था और इस युद्ध में पूरा विश्व ही समा गया था और यह एक प्रकार की प्रलय की सी घटना थी । जहाँ तक इस कहानी के कोरी कल्पना होने का प्रश्न है वह बात इस लिये ठीक नहीं मालूम पड़ती कि महाभारत ग्रन्थ और उसमें घटित

घटनाओं का तथा उसके पात्रों का वर्णन यदाकदा अनेक पौराणिक ग्रन्थों और वेदों में भी आता है। कोरी काव्य कल्पना को इतना सम्मानित स्थान बाद के दार्शनिक व ग्रन्थकार देवें यह सम्भव नहीं लगता। इसमें अतिरंजना की भी सम्भावना हो सकती थी परन्तु वह भी इसलिये विवेकसंगत नहीं मालूम पड़ता कि जनसंख्या विशेषज्ञों का मत है कि आज से ४००० वर्ष पूर्व तो विश्व की जनसंख्या केवल कुछ लाख ही होगी। जनसंख्या वृद्धि की गति को देखते हुए यह बात सही सिद्ध होती है कि जब तक ४८०० वर्ष पूर्व जनसंख्या कुछ लाख ही न होकर यदि कुछ करोड़ भी होती तो वर्तमान जनसंख्या से कहीं अधिक संख्या में मनुष्य इस पृथ्वी पर होते। विशेषकर इसलिये कि इस बीच में तो ऐसा कोई प्रलयंकारी युद्ध हुआ ही नहीं जिसमें जन संख्या एक दम नीचे आ जावे। ज्ञात इतिहास में तो इस शताब्दी के दो महायुद्ध ही सबसे भयंकर युद्ध गिने जाते हैं परन्तु इनमें भी मनुष्य जनसंख्या अप्रावित रहकर बढ़ती ही गई है। तो जिस समय महाभारत ग्रन्थ लिखा गया उसके पहले यदि मनुष्य संख्या कभी भी अरबों में न रही होती तो यह कथाकार या कवि की कल्पना में भी नहीं आती। भारतीय दर्शन में प्रलय के वर्णन आते हैं। यदि कभी प्रलयंकारी रूप से मनुष्यों की मृत्यु न हुई होती तो प्रलय का वर्णन भी भारतीय ग्रंथों में न आता। अब ऐसे प्रलय का निकटतम स्वरूप तो महाभारत में ही मिलता है। इन बातों से यह निष्कर्ष निकालना अनुचित न होगा कि महाभारत युद्ध के समय विश्व की जनसंख्या कई अरब थी। उस युद्ध में इनका विनाश हुआ और उसके पश्चात जनसंख्या बहुत थोड़ी रह गई जिससे वृद्धि पाते-पाते वह आज के जनसंख्या विस्फोट की स्थिति पर आ पहुंची और एक बार फिर विश्व प्रलय के कगार पर खड़ा है।

महाभारत युद्ध में जिन अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग किया बताया जाता है उनकी विध्वंसक क्षमता का यदि हम हिसाब लगायें तो वह बात सहज समझ में आ जावेगी कि उनमें विश्व की सम्पूर्ण मानव

समाज को आज की ही भाँति नष्ट करने की क्षमता थी।

'आग्नेयास्त्र' का वर्णन करते हुए लिखा गया है कि 'जब अश्वत्थामा ने आग्नेय अस्त्र छोड़ा तो वह बाण धूमरहित अग्नि के सम्मान देदीप्यमान हो रहा था। उसके छूटते ही आकाश से बाणों की घनघोर वृष्टि होने लगी और चारों ओर आग की लपट फैल गई, हवा गर्म हो गई, सूर्य का तेज फीका पड़ गया, बादलों से रक्त की वर्षा होने लगी, तीनों लोक संतप्त हो उठे, जलाशयों के गर्म हो उठने के कारण उनके भीतर रहने वाले जीव जलने व छटपटाने लगे, महाप्रलय के समय संवर्तक नामवाली आग प्रगट होकर पाण्डव सेना को दग्ध करने लगी।

उपरोक्त बातों को यदि हम आज की वैज्ञानिक उपलब्धियों के सन्दर्भ में देखें तो यह सारे दृश्य तब ही उपस्थित होते हैं या हो सकते हैं जब कोई भयंकर आणविक बम का विस्फोट किया जाय। ऐसे विस्फोट से उत्पन्न स्थिति और महाभारत वर्णित स्थिति में इतनी साम्यता आज से हजारों वर्ष पूर्व कवि की कोरी कल्पना से आ जाये यह सम्भव नहीं प्रतीत होता। इससे तो एक ही निष्कर्ष निकलता है कि अवश्य आज जैसे बम पहले भी थे और उनके द्वारा सृष्टि का महाविनाश भी हुआ था।

इसके अतिरिक्त अन्य आयुधों का भी ऐसा वर्णन महाभारत में है जो वर्तमान वैज्ञानिक युग की उपलब्धियों से किसी प्रकार कम नहीं हैं। 'वारुणास्त्र' का वर्णन है जिससे कृत्रिम जलवृष्टि की जा सकती थी। 'वायव्यास्त्र' से आँधी चला दी जाती थी। 'पर्जन्यास्त्र' से बादल पैदा किये जाते थे। 'भौमास्त्र' से पृथ्वी और 'पर्वतास्त्र' से पर्वत प्रकट करने का भी वर्णन आता है। इसके अतिरिक्त 'ब्रह्मसिर' नाम का दिव्य अस्त्र था। इस अस्त्र में सारे जगत को जला डालने की शक्ति थी। आज अपनी पराकाष्ठा पर पहुचा विज्ञान जिन उपलब्धियों से मानव जगत को चकाचौंध और भयभीन कर रहा है उसका आज से हजारों वर्ष पूर्व किया गया सजीव चित्रण क्या कथाकार की कोरी कल्पना हो सकती है? विवेक इसे स्वीकार नहीं

करेगा। इसके अतिरिक्त चन्द्रलोक आदि की अन्तरिक्ष यात्राओं का वर्णन, वायुमार्ग से युद्ध का वर्णन आदि अनेक ऐसे प्रसंग आते हैं जो इस बात का स्पष्ट संकेत देते हैं कि महाभारत युद्ध का ऐसा स्वरूप था जिसकी लपेट में सारा विश्व आ गया था। जनसंख्या के भार से दबी पृथ्वी का भार इस युद्ध ने हलका किया। उसके पश्चात पुनः इस पृथ्वी पर जनसंख्या वृद्धि के लिये स्थान बना। अब पुनः ठीक वैसी ही स्थिति आ पहुँची है। सृष्टि पर जनसंख्या का अतिरिक्त बोझ, उसका विनाश पुनः वृद्धि, पुनः विनाश का चक्र वृत्ताकार रूप से एक महाभारत से दूसरे महाभारत की अवधि के भीतर चलता ही रहता है।

यदि महाभारत युद्ध के इस उपरोक्त वर्णित स्वरूप की सम्भावना को ध्यान में रखकर मानव इतिहास की खोज करे तो अवश्य ही इतिहास के अध्ययन को एक नई दिशा मिलेगी।

अध्याय ४

गीता-महाभारत की पुनरावृत्ति

पुनरावृत्ति सिद्धान्त में जहाँ चार युगों के चक्र का वृत्ताकार पुनरावर्तन भारतीय दर्शन का अभिन्न अंग है वहीं पर भारतीय ग्रन्थों में कई स्थानों पर इस तरह का वर्णन आता है जिससे मालूम पड़ता है कि उन युगों में घटित घटनाओं की भी पुनरावृत्ति होती रहती है। इसी संदर्भ में श्रीमद्‌भगवद्‌गीता के चौथे अध्याय में भगवान के ये महा-वाक्य भी महत्वपूर्ण हैं कि जब-जब धर्म की ग्लानि होती है और अधर्म फैल जाता है तब-तब मैं स्वयं ही अवतार लिया करता हूँ। 'युगे-युगे' साधुओं की रक्षा और दुष्टों के नाश के लिये तथा धर्म की संस्थापना के अर्थ मैं अवतार लिया करता हूँ।

गीता के इन महावाक्यों में जो 'युगे युगे' शब्द है उसका अर्थ लोग यह लेते हैं कि परमात्मा का अवतरण हर युग में होता है। परन्तु 'युगे-युगे' शब्द का अर्थ लगाते समय यदि यह याद रक्खा जाय कि ये शब्द 'धर्म ग्लानि' के सन्दर्भ में उपयोग किया गया है तो इसका यह अर्थ कदापि न लग सकेगा कि परमात्मा का अवतार हर युग में होता है। इसका सीधा सरल अर्थ यही निकलेगा कि जिस युग में धर्मग्लानि होती है उस युग में परमात्मा का अवतरण होता है। सत्युग और त्रेतायुग में तो धर्म पूर्ण रूप स्थित है। वहाँ पर सतोप्रधानता है इसलिये वहाँ तो धर्मग्लानि का प्रश्न ही नहीं है। द्वापर से धर्म ग्लानि प्रारम्भ अवश्य होती है परन्तु वह इतनी पराकाष्ठा पर नहीं पहुँचती कि उसे ठीक करने के लिये परमात्मा को स्वयं आना पड़े। दूसरी बात कि परमात्मा जब आते हैं तो अधर्म का विनाश करने के साथ-साथ सतधर्म की स्थापना करना भी उनका काम है। यदि वह द्वापर युग में आवें तो फिर

युगक्रम से उसके बाद कलियुग को आना ही है। यदि परमात्मा कलियुग का प्रारम्भ करा कर जावें तो यह नहीं कहा जा सकेगा कि उन्होंने धर्म की स्थापना की। इसलिये कलियुग के अन्त का ही एक ऐसा समय है जब उपरोक्त महावाक्यों के अनुसार परमात्मा पृथ्वी पर अवतरित हो अधर्म अथवा कलियुग का विनाश कर सत्धर्म अथवा सत्युग की स्थापना कर सकते हैं। इस दृष्टि से देखने पर उपरोक्त 'युगे युगे' का यही अर्थ निकलता है कि परमपिता परमात्मा प्रत्येक चतुर्युग में एक बार कलियुग के अन्त और सत्युग आदि के संगम समय पर अवतरित होते हैं। इसे हम पुरुषोत्तम 'संगम युग' कहेंगे। चूंकि प्रत्येक कलियुग के अन्त में धर्म की अति ग्लानि होती है और उसके बाद सत्युग स्थापन करने की आवश्यकता रहती है इसलिये हर चतुर्युगी में कलियुग के अन्त और सत्युग आदि के संगम समय पर परमात्मा के अवतरण की पुनरावृत्ति होती रहती है।

गीता के भगवान ने चौथे अध्याय में यह भी कहा कि यह योग मार्ग अथवा योग का ज्ञान मैंने पहले सूर्य को बतलाया था। सूर्य ने मनु को और मनु ने इक्ष्वाकु को बतलाया। ऐसी परम्परा से प्राप्त हुए इस योग को राजर्षियों ने जाना। परन्तु दीर्घकाल के अनन्तर वह योग इस लोक से नष्ट हो गया। इस पुरातन योग को मैं तुझे बतला रहा हूँ।

उपरोक्त वचनों से यह स्पष्ट होता है कि परमपिता परमात्मा जब पृथ्वी पर अवतरित होते हैं तो मनुष्यात्माओं के कल्याण अर्थ उसी योग को सिखाते हैं जो उन्होंने पिछले अवतरण के समय सिखाया था सिखाना भी उन्हें इसीलिये पड़ता है कि योग टूटने से मनुष्य योगी से भोगी बन जाते हैं। भोगी बनने से अधर्म में प्रवृत्त हो जाते हैं।

गीता ज्ञान की पुनरावृत्ति

पूर्व अध्याय में युगों की आयु स्पष्ट करते समय वर्तमान समय की सामाजिक अवस्था व पिछले महाभारत के समय की सामाजिक अवस्था में समानता दर्शायी जा चुकी है। वर्तमान समय में भी अधर्म

वैसी ही पराकाष्ठा पर है जैसा पिछले महाभारत के समय था। अतः यह परमात्मा के अवतरण का उपयुक्त समय है। वास्तविकता यह है कि परमपिता परमात्मा अधर्म विनाश और सत्धर्म की स्थापना का यह कार्य कर रहे हैं। आत्मा परमात्मा और सृष्टि चक्र का ज्ञान ब्रह्मा मुख से देकर ब्रह्मामुखवंशावली ब्राह्मणों की उत्पत्ति हो चुकी है और इन ब्राह्मणों द्वारा संसार को ईश्वरीय संदेश दिया जा रहा है। दो शब्दों का यह दिव्य सन्देश है 'पवित्र बनो और योगी बनो'। इन दो शब्दों के ईश्वरीय सन्देश को जीवन में अपनाने के लिये आत्मा के वास्तविक रूप, गुण, कर्तव्य और धाम का परिचय भी आवश्यक है तो परमात्मा भी 'जो है और जैसा है' उसको उस रूप से जानने के लिये अव्यक्त मूर्त परमात्मा के नाम रूप, गुण, कर्तव्य और धाम का सही परिचय भी आवश्यक है, क्योंकि इस परिचय के बिना आत्मा का परमात्मा से न स्नेहपूर्ण योग लग सकता है और न उसे आत्मिक सम्बन्ध के अतीन्द्रिय सुख की अनुभुति हो सकती है। परमात्मा यह ज्ञान देकर आत्माओं को निरन्तर योग में स्थिर रह कर्म करने की शिक्षा देते हैं। उनके द्वारा दिये गये ज्ञान का सार है कि आत्मिक ज्ञान, परमात्मा की याद व दिव्य गुणों की धारणा का निरन्तर अभ्यास ही वास्तविक धर्म है। इस धर्म में स्थित होकर कर्म करना ही सच्चा प्रवृत्ति मार्ग है। इसे ही कर्मयोग कहा जाता है। इसमें कर्म करते समय आत्मविस्मृति नहीं होती और आत्मस्मृति में रहने के लिये कर्म नहीं छोड़ना पड़ता। परमात्मा पवित्र प्रवृत्ति मार्ग की स्थापना करते हैं। ऐसा पवित्र जिसमें काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार, आलस्य और भय आदि विकारों का नाम-निशान न हो। ऐसी विकार रहित सृष्टि को ही सत्युगी दैवी सृष्टि कहेंगे। ऐसी सृष्टि की स्थापना को ही सत्धर्म की स्थापना कहा जाता है।

इस कार्य हेतु परमपिता परमात्मा के साकार माध्यम प्रजापिता ब्रह्मा ने ज्ञान यज्ञ अथवा ईश्वरीय विश्वविद्यालय स्थापन किया है। इसका नाम प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय है। इस

विश्वविद्यालय द्वारा ईश्वरीय ज्ञान और सहज राजयोग की शिक्षा दी जा रही है। इस विद्यालय में ब्रह्मा मुखवंशावली ब्राह्मण विश्व कल्याण अर्थ लोगों को ईश्वरीय ज्ञान सुना रहे हैं व सहज राजयोग की शिक्षा दे रहे हैं। गृहस्थ व्यवहार में रहते हुए सम्पूर्ण पवित्रता का पाठ पढ़ाकर आत्माओं में पवित्रता का संचार कर रहे हैं। इस प्रकार भगवान का गीता वर्णित कार्य पूरी तरह वर्तमान समय चल रहा है। यद्यपि यह भी सत्य है कि इस ज्ञान को लेकर जीवन में अपनाने वालों की संख्या अभी कुछ सहस्रों में ही है परन्तु जीवन को ईश्वरीय ज्ञान के अनुरूप ढालने का साहस सब तो नहीं रख सकते। इसीलिये गीता में (७·३) भगवान ने कहा है कि 'हजारों मनुष्यों में कोई एक आध ही सिद्धि पाने का यत्न करता है और प्रयत्न करने वाले इन अनेक सिद्धि पुरुषों में से कोई एक आध को ही मेरा सच्चा ज्ञान हो पाता है।' भगवान के महावाक्यों को चरितार्थ करते हुए यदि थोड़ी संख्या में ही लोग इसे ले पा रहे हैं तो इसमें आश्चर्य क्या है। सच तो यह है कि भगवान जब पृथ्वी पर अवतरित होते हैं तो उस समय माया का इतना प्रसार रहता है और अपने आप को भगवान कहने वालों की इतनी भरमार रहती है कि साधारण तन में अवतरित परमात्मा को कोई पहचानते नहीं। तभी तो भगवान ने स्वयं गीता में (९·११) कहा है कि 'मूढ़ लोग मेरे परम स्वरूप को नहीं जानते। वे मुझे मानव तनधारी समझ कर मेरी अवहेलना करते हैं।' गीता (७·२४) में भगवान कहते हैं कि 'बुद्धिहीन लोग मेरे श्रेष्ठ, उत्तमोत्तम और अव्यय रूप को न जानकर मुझ अव्यक्त को व्यक्त हुआ मानते हैं।' आगे कहा (७·२५) मैं अपनी योगरूप माया से आच्छादित रहने के कारण सबको प्रगट नहीं दिखता। गीता (११·५३) में भगवान कहते हैं कि 'जैसा तूने मुझे देखा है वैसा मुझे वेदों से, तप से, दान से अथवा यज्ञ से भी कोई देख नहीं सकता।' भगवान के इन वचनों से स्पष्ट है कि जब परमात्मा अवतरित होते हैं तो उनको बहुत कम व्यक्ति पहचानते हैं और मिथ्या ज्ञान में डूबे देहाभिमानी तथाकथित विद्वान उनके द्वारा

दिये जा रहे ज्ञान पर विवेक चलाने की भी आवश्यकता नहीं समझते परन्तु अन्त में जब उन्हें बोध होता है उस समय तक समय निकल चुका होता है और पछताने के सिवा उनके पास कुछ नहीं रहता। ऐसे समय मिथ्या ज्ञान, कर्मकाण्ड, अन्ध श्रद्धा और विवेकहीन भक्ति का इतना फैलाव होता है कि जब भगवान मनुष्यप्राणियों को इससे निकल कर ज्ञान में स्थिर होने को कहते हैं तो उन्हें कठिन लगता है।

इस विश्वविद्यालय में परमात्मा की पहली शिक्षा होती है कि काम महाशत्रु है। इसको जीतो और ब्रह्मचर्य में रहो तो मूढ़मति लोग कहते हैं कि यह कैसे सम्भव है। ऐसा होने पर सृष्टि कैसे चलेगी? परन्तु गीता में (३·३७) भगवान कहते हैं कि 'रजोगुण से उत्पन्न होने वाला बड़ा पेटू व पापी यह काम एवं क्रोध ही शत्रु है।' आगे कहा (३·३८-३९) जिस प्रकार धुएँ से अग्नि, धूल से दर्पण और झिल्ली से गर्भ ढका रहता है उसी प्रकार इससे यह सब ढका हुआ है। ज्ञाता का यह कामरूपी नित्यवैरी कभी न तृप्त होने वाला अग्नि है।

इस विश्वविद्यालय द्वारा परमपिता परमात्मा सहज राजयोग या ज्ञानयोग सिखाकर योग अग्नि द्वारा पुराने पापों को दग्ध करा रहे हैं। दैवी गुणों को धारण करा कर मनुष्य को दैवी गुणों से युक्त देवता बनने की शिक्षा दे रहे हैं। संक्षेप में वर्तमान समय वह गीता प्रकरण पूरी तरह पुनरावृत्त हो रहा है जो पिछले कलियुग के अन्त में चला था। अगर पवित्रता के नियमों में रहकर और पूर्वाग्रहों को छोड़कर कोई जिज्ञासु या विद्यार्थी बन अपने जीवन को ज्ञानमय बनाने की इच्छा रख इस ज्ञान का अध्ययन करें और यहाँ सिखाये जा रहे योग को सीखें तो हमें पूर्ण आशा है कि वह यह स्पष्ट समझ लेंगे कि गीता प्रकरण पुनरावृत्त हो रहा है।

महाभारत युद्ध की पुनरावृत्ति

महाभारत युद्ध के पूर्व जिस प्रकार के द्वेष भाव, कलह व दुर्भावना का वातावरण था वह सब इस समय देखने को मिल रहा है। उस

युद्ध में उभय पक्षों में से प्रत्येक की ओर भिन्न-भिन्न देशों के राजा आ मिले थे। इस समय भी विश्व दो गुटों में बँट गया है, यदि कोई तीसरा गुट है तो वह भी समय पर तटस्थ रह सके ऐसा सम्भव नहीं लगता। परिस्थितियाँ ही ऐसी हैं जिसमें किसी भी सम्भावित विश्व युद्ध में सभी राष्ट्रों का प्रभावित होना अवश्यम्भावी हो गया है।

घातक अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण और संग्रह की होड़ लगी हुई है। इतना तो सर्वविदित है कि यदि एक बार आणविक विश्व युद्ध की चिनगारी निकली तो वह मानवता को ऐसे ही भस्मीभूत करने में समर्थ है जैसे पूर्व महाभारत के समय हुआ था और वह समय भी अधिक दूर नहीं लगता। अभी हाल में ही हिन्दुस्तान टाइम्स (९ फरवरी १९७६) में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार हावर्ड यूनीवर्सिटी के प्रोफेसर व नोवुल पुरस्कार विजेता डाक्टर जार्ज वाल्ड ने विचार प्रकट किया है कि 'वैज्ञानिकों के लिये यह सोचना कठिन हो गया है कि मानव समुदाय ईसवी सदी २००० के बाद कैसे चलेगा।' उन्होंने कहा कि 'समाज इस समय मृत्यु के लिये तैयारियाँ कर रहा है, जीवन के लिये नहीं।' उन्होंने कहा कि 'विश्व अब विनाश की राह पर चल पड़ा है।' इसके चार चिन्ह बताये—(१) आणविक शक्ति का संग्रह (२) प्रदूषण (३) प्राकृतिक साधनों का अनुचित प्रयोग व ह्रास और (४) जनसंख्या वृद्धि।

वैज्ञानिक ऐसे अणु युद्ध के संभावित समय को घड़ी की सुई द्वारा भी दर्शाने लगे हैं। वाशिंगटन के 'वुलेटिन आफ दि एटामिक साइंटिस्ट्स' के फरवरी-मार्च १९६८ के मुखपृष्ठ पर एक घड़ी छापी गई है जिसमें समय की सूई रात्रि के बारह बजे (Zero hour) से केवल पांच मिनट पहले की स्थिति में दिखायी गयी थी। घड़ी में रात्रि का बारह बजे का अंक उस समय का सूचक है जबकि अणु बमों द्वारा सृष्टि का महाविनाश होगा। इस घड़ी का नाम विनाश घड़ी है। घड़ी को ११-५५ पर रखने का मतलब है कि महाभारी महाविनाश अब बहुत ही निकट है।

अभी हाल ही में छपे समाचारों के अनुसार वर्तमान समय वैज्ञानिक उपलब्धियों में निम्नलिखित भी सम्मिलित है :

(i) घटाओं में चमकने वाली बिजली को शत्रु के स्थानों पर प्रहार करने के लिये प्रेरित करना ।

(ii) समुद्री तूफानों को विध्वंस करने के लिये शत्रु देश के निकट तटवर्ती क्षेत्र की ओर उन्मुख करना ।

(iii) गुप्त विद्युत तरंगों को मानव मस्तिष्क में उथल-पुथल मचाने के लिये धरातल पर सम्प्रेषित किया जा सकता है ।

स्टाकहोम अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति अनुसंधान संस्थान के डा० फ्रैंक बर्नाबाय इस सम्बन्ध में लिखते हैं कि :

(a) समुद्री तूफान और झंझावात में निहित ऊर्जा को यदि शक्ति पुंज के रूप में प्राप्त कर लिया गया तो इसका उपयोग युद्ध-भूमि, हवाई अड्डों, बन्दरगाहों और नौसैनिक बेड़ों को नष्ट करने में किया जायेगा ।

(b) हिम स्खलन या बड़े पैमाने पर भूस्खलन का प्रयोग करके पर्वतों के दर्रे बन्द करने, नदी में जहाजरानी रोकने और संचार मार्गों को अवरुद्ध करने में किया जा सकेगा ।

(c) मेघों में ओले पैदा कर विमानों के एंटिना और बिजली की लाइनों को ध्वस्त किया जावेगा ।

(d) मेघों की बिजली को संचार सुविधाओं को ध्वस्त करने व आग लगाने में किया जा सकेगा । अन्त में उन्होंने कहा कि कृत्रिम वर्षा के सदृश वैज्ञानिक अब बादलों से कृत्रिम बिजली भी पैदा करने में समर्थ हैं ।

इस प्रकार यदि हम ध्यान से देखें तो आज का वैज्ञानिक अपने बुद्धिरूपी पेट से आग्नेयास्त्र व मूसल जैसे सर्वविनाश करने वाले मिसाइल्स, राकेट, बाम्बस व प्राकृतिक हथियार आदि सभी कुछ प्राप्त

कर चुका है। जहाँ एक ओर मानव स्वयं अपने मन, इन्द्रियों व विकल्पों को रोकने में सर्वथा असमर्थ है वहीं दूसरी ओर उसने बाह्य प्रकृति पर सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया है और प्रत्येक तत्व उसके इशारे मात्र पर भयंकर विनाश लीला प्रस्तुत करने को जैसे उद्यत है। इस प्रकार बाह्य प्रकृति पर अधिकार प्राप्त करने से वर्तमान मानव प्राकृतिक आपदाओं का भी स्वयं जनक बन गया है। जब कभी ईर्ष्या द्वेष, आवेश क्रोध या किसी अन्य मानसिक उत्तेजना के कारण दोनों पक्षों में से एक का भी नेता अपना मानसिक सन्तुलन एक क्षण के लिये भी खो दे, उसी ससय प्राकृतिक आपदाएं व अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध भयंकर विनाश लीला अथवा ताण्डव नृत्य प्रारम्भ कर देंगी। मनुष्य की इन आसुरी उपलब्धियों को यदि हम महाभारत काल की विनाश लीला से तुलना करें तो बड़ी समता दिखाई पड़ेगी।

हम पहले अध्याय में यह बता आये हैं कि महाभारत युद्ध में जितने थोड़े समय में जितने अधिक मनुष्यों की हत्या हुई वह आज के आणविक अस्त्र-शस्त्रों द्वारा ही सम्भव है। यह भी बताया गया कि उस समय विज्ञान की जो पराकाष्ठा थी वह सब इस आणविक युद्ध में नष्ट-भ्रष्ट हो गई और मनुष्य पुनः पत्थर युग में लौटने पर मजबूर हो गया। इसके लिये ही प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइन्सटीन ने कहा था कि चौथे विश्व युद्ध में केवल पत्थरों के हथियार होंगे। इस प्रकार पिछले महाभारत की सभी बातें जैसे कि हूबहू पुनरावृत्त हो रही हैं। यदि पुराने साहित्य की पूरी खोज की जाय तो बहुत से ऐसे अकाट्य प्रमाण मिलेंगे जिनसे प्राचीन समय की वैज्ञानिक प्रगति की समानता वर्तमान समय से हो सकेगी। पौराणिक साहित्य की खोजों के आधार पर अब तो अनेक विद्वानों द्वारा यह कहा जाने लगा है कि आज का न्यूकलीय सिद्धांत प्राचीन भारत को मालूम था। यदि हम केवल उस कड़ी को जोड़ दें कि कैसे यह विद्या लोप हो गयी और फिर यह पुनः वर्तमान समय में ज्ञात हुआ तो महाभारत प्रकरण के पुनरावर्तन को समझना हमारे लिये सहज हो जावेगा।

विश्व परिवर्तन

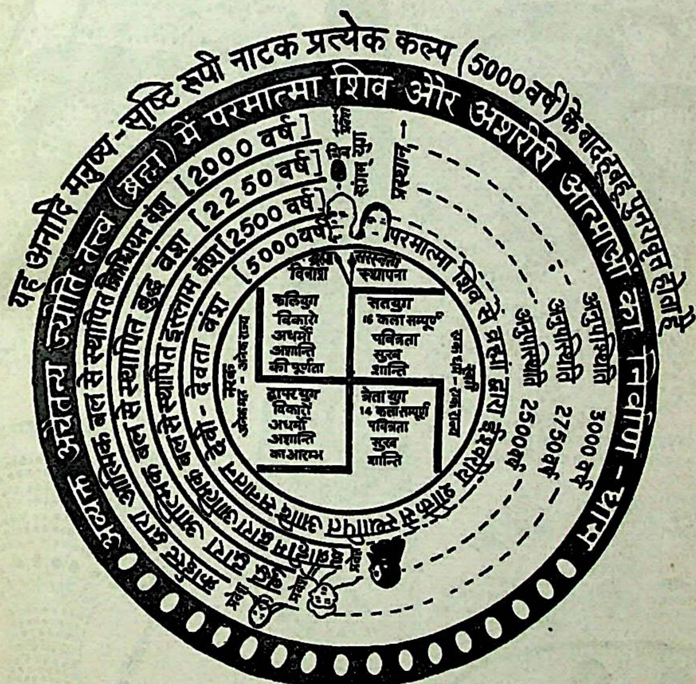
गीता ज्ञान दाता परमपिता परमात्मा शिव गीता ज्ञान द्वारा जो आध्यात्मिक क्रान्ति करा रहे हैं, उसके द्वारा मानव विचारों में परिवर्तन लाकर मानव को जिस प्रकार पवित्रता के पथ पर अग्रसर करा रहे हैं वह निश्चय ही एक नये युग—सत्युग—का सूत्रपात है। यह विश्व युद्ध उसके लिये संसार से दूषित विचार वाले मनुष्यों का सफाया करने के साथ-साथ जनसंख्या को भी इतने नीचे ले आयेगा जिससे न केवल वर्तमान जनसंख्या की समस्या हल होगी बल्कि उसमें इतनी गुंजाइश हो जावेगी कि फिर सहस्रों वर्षों तक मनुष्य अपनी संख्या को धीरे-धीरे बढ़ा सकेगा। जब मालथस द्वारा दी गई कृत्रिम अवरोध और प्राकृतिक अवरोध दोनों ही जनसंख्या की वृद्धि को रोकने में असमर्थ हो जाते हैं तो ऐसा विशेष उपाय चार युगों के चक्र में एक बार कलियुग के अन्त में आता है जब सृष्टि की जनसंख्या ऐसे स्तर पर आ जाती है जहाँ से फिर वह चार युगों तक बढ़ती रहे। इसी तरह सृष्टि पर अनेक धर्म, अनेक राज्य के आधार पर जो झगड़े चल रहे हैं वे भी समाप्त होकर एक विश्व राज्य, एक विश्व मानव धर्म अथवा आत्म धर्म की स्थापना हो जाती है। पिछले महाभारत में ऐसा ही हुआ था और भावी महाभारत के बाद भी इसी प्रकार के परिवर्तन की सम्भावनायें हैं।

अमेरिका की प्रख्यात ज्योतिषी श्रीमती जीन डिक्शन अपनी भविष्यवाणी में कहती हैं कि 'एक ऐसी आत्मा का जन्म हो चुका है जो संसार का कायाकल्प करेगा। सम्प्रदायों की संकीर्णता मिटाकर वह एक ऐसे सार्वभौम विश्वधर्म की स्थापना करेगा, जो विश्व के हर नागरिक को मान्य होगा। १९८० के आस-पास होने वाले विनाशकारी युद्ध के समय भी इस मसीहा का कार्य धर्म-स्थापना के रूप में चलता रहेगा और युद्ध के पश्चात वह संसार का सर्वसमर्थ व्यक्ति बन जावेगा।' उनके अनुसार १९९९ तक तृतीय विश्व युद्ध और सभी भयंकर घटनाएं हो लेंगी और नये युग का पूर्ण विकास भी हो जावेगा।

इसी प्रकार जार्ज बाबेरी ने, जो मिस्र की गुप्त विद्याओं के प्रकाण्ड

पंडित थे, यह भविष्यवाणी की थी कि, संसार को सत्युग का प्रकाश देने वाली आत्मा भारतवर्ष में जन्म ले चुकी है। जो हजारों अज्ञानी-मूर्ख लोगों के विरोध के बावजूद अपने प्रचण्ड और प्रखर रूप से संसार को झकझोर देगा। श्री डेनियल का मत है कि ऐसी आध्यात्मिक शक्ति से भौतिकवादी पराजित हो जावेंगे एवं सारे संसार का शासन-सूत्र एक स्थान से चलेगा, एक भाषा और एक संस्कृति होगी, शहरों की संख्या बहुत थोड़ी रह जावेगी, संचार के साधनों का यहां तक विकास हो जावेगा कि लोग अपने मन की बात दूसरे लोगों तक बेतार के तार की तरह पहुंचा दिया करेंगे।'

उपरोक्त बातों के लिखने का उद्देश्य मानव मात्र को यह बतलाना है कि विश्व इस समय चारित्रिक संकट अथवा धर्म ग्लानि की चरम सीमा पर है। इस अधर्म का विनाश व सत्धर्म की स्थापना हेतु भगवान का अवतरण हो चुका है। अब कलियुग जा रहा है तथा वह सत्युग आ रहा है जिसमें प्रत्येक मानव स्वभाव-संस्कार से पवित्र व संयमी होगा। यह दो चतुर्युगों का सुहावना संगम अथवा संधिकाल है जो अमृतवेला अथवा ब्रह्म मुहूर्त कहा जाता है। अब परमपिता परमात्मा प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा ज्ञानामृत पिला रहे हैं। अब दुखी व अशान्त आत्माओं की ब्रह्मलोक या शान्तिधाम वापिस जाने की घड़ी आ पहुची है। अतः प्रत्येक प्रिय भाई-बहन को चाहिये कि वह वर्तमान समय के महत्व को पहिचानकर, अपने परमपिता परमात्मा से प्राप्त हो रहे सहज ईश्वरीय ज्ञान तथा राजयोग द्वारा अपने जीवन को पवित्र, योगी एवं सदगुण युक्त बताये और इस समय प्रभु पिता से स्नेहपूर्ण योग रखकर अपने संस्कारों को आसुरी से दैवी, असंयत से संयत में परिवर्तन करके देवता बनने का सर्वोत्तम पुरुषार्थ करे। इस पुस्तिका का उद्देश्य आगामी विनाश की बात बताकर मनुष्य को डराना नहीं बल्कि समय को पहिचान देकर मानव को आत्मिकता की ओर ले जाना है।


यह अनादि मनुष्य-सृष्टि रूपी नाटक प्रत्येक कल्प (5000 वर्ष) के बाद हूबहू पुनरावृत्त होता है
परमात्मा शिव और अशरीरी आत्माओं का
क्रिश्चियन वंश [2000 वर्ष]
बौद्ध वंश [2250 वर्ष]
इस्लाम वंश [2500 वर्ष]
देवी - देवता वंश [5000 वर्ष]
परमात्मा शिव
विनाश
स्थापना
कलियुग
विकारों
अधर्मों
अशान्ति
की पूर्णता
सतयुग
16 कला सम्पूर्ण
पवित्रता
सुख
शान्ति
द्वापर युग
विकारों
अधर्मों
अशान्ति
का आरम्भ
त्रेता युग
14 कला सम्पूर्ण
पवित्रता
सुख
शान्ति
नरक
स्वर्ग
अनुपस्थिति 3000 वर्ष
अनुपस्थिति 2750 वर्ष
अनुपस्थिति 2500 वर्ष
प्रस्थान

इस विराट मनुष्य-सृष्टि रुपी कल्प वृक्ष की आयु ५००० वर्ष है

